प्रजा प्राण सम तेरी प्यारी है विचार से ॥
पूर्ण स्वतंत्रता दे राखी है तू ने सब को ।
दिव्य बिलोचन खोल २ ये हंसतीं हम को ॥ ८ ॥
ये तारा गण-प्रजावर्ग, सब पहिले भी थे ।
कब आते, कब जाते थे, गो ज्ञात नहीं थे ॥
आज मनोहर छबि ये अपनी प्रगट दिखा कर ।
निज सुराज का सुख समझाते हमें कृपा कर ॥ ९ ॥
छितिज वृत्त से घिरा हुआ है राज्य तुम्हारा ।
दिव्य भूमि को देख व्यग्र है चित हमारा ॥
क्योंकि लोक का हृदय सरोवर है अति दुर्मल ।
प्रतिविंबित होता न कभी तज कर विकार छल ॥ १० ॥
निन्दित एक विकार प्रकृति में महा हमारी,
है जो गुण से विमुख, छिद्र की सेवा कारी ।
इसी वुद्धि से धरायान पर हम फिरते हैं ॥
अभिमुख तेरी ओर, दोष खोजा करते हैं ॥ ११ ॥
कभी २ तेरे सु अंग को घन युत पाते ।
पाते ही इस के हम मन में मोद बढ़ाते ॥
कहते हैं दोषांक इसे, पर ठीक नहीं है ।
साबुन फेन समान अंत मल हारक ही है ॥ १२ ॥
सज्जन जनकासा अति उत्तम गुण इस में है ।
चौमासे से अनुभव इस का मिले हमें है ॥
कृषि के लिये सुधा समान वह जल बरसाता ।
बाद विदा हो तेरा अनुपम रूप दिखाता ॥ १३ ॥
है कुंवार का घाम, सभी कहते हैं, तीक्ष्ण ।
पर इस से पकती है फसल सियारी क्षण क्षण ॥
दिन की गर्मी चन्द्र किरण से हट जाती है ।

सरस सफल नव पौधों से भूलद् जाती है ॥ १४ ॥
सब का कारण है वह तेरी स्वच्छहृदयता ।
नभ गंगा का स्वच्छ, नहीं क्यों, तन लख पड़ता ?
तेरा दिन औ रात उभय ही हैं सुख कारी ।
पर दिन से निशि को कहते अति शोभाधारी ॥ १५ ॥
कृष्ण चन्द्र ने तेरे नीचे रास मचाया ।
ऐक्य भाव का शुद्ध प्रेम से तत्व बुझाया ॥
स्वच्छ हृदय के बिना प्रेम बिलकुल कच्चा है ।
गाया हुआ पुराणों में यह मत सच्चा है ॥ १६ ॥
विजय चढ़ाई हेतु राम जी को तू भाया ।
शत्रु नाश कर जिन ने जग में यश फैलाया ॥
ऐसे २ महाजनों ने तेरा आदर ।
कर आदर्श बताया परिमलता का सुंदर ॥ १७ ॥
युगुल शक्तियां—सौर, चन्द्र, तेरी प्रसिद्ध हैं ।
जग की बहु उपका कारिणी स्वतःसिद्ध हैं ॥
उक्त मूर्त्ति–आराधन को दो शीस उठाये ।
बङ्ग देश ने मानो सुन्दर वेश बनाये ॥ १८ ॥
ज्येष्ट पुत्र भारत माता के बङ्ग निवासी ।
ठंढे से थे पड़े, चान्द्रमस शक्ति उपासी ॥
आज नये उत्साह प्रेम औ भक्ति पुरस्सर॥
सौर शक्ति युत शारद पूजा करते घर घर ॥ १९ ॥
अति अचरज का काम और तुझ से होता है ।
पावक को जल कौन भला जो कर सकता है ?
जब सूरज की दाह भूमि पर नहीं समाती,
व्याकुल हो गंभीर गर्भ में तेरे आती ॥ २० ॥

आते ही वह तुझ में प्रति क्षण बरसाती है।
जल शीकर तुरत भूमि ठंढी करती है॥
होती जिस से हरी भरी भाजी तरकारी।
दिन दूनी बढ़ती जाती है फसल-उन्हारी॥ २०॥
कहने में साधारण तेरा रूप शून्य है।
निर्गुण ब्रह्म समान मूर्ख को भी सुगम्य है॥
पर जब तुझ में गुण विशेषता पा जाते हैं।
वर्णन करते पंडित गण भी थक जाते हैं॥ २२॥
तेरे ही उपकारों से पृथ्वी भारी है।
तुझ से पीछे यह रचना भौतिक सारी है॥
सब विधि से तू पूज्य; अहो, शरदम्बर प्यारे!
है वास्तव में सच अनन्त गुण ग्राम तुम्हारे॥ २३॥

—::—

—:०:—

REGISTERED No. A—308.

हिन्दी प्रदीप

मासिक पत्र

विद्या, नाटक, इतिहास, साहित्य, दर्शन, राजसम्बन्धी इत्यादि
के विषय में हर महीने की पहिली को छपता है ॥

शुभ सरस देश सनेह पूरित प्रगट ह्वै आनन्द भरै ।
बचि दुसह दुरजन वायुसों मणिदीप सम थिर नहिं टरै ॥
सूझै विवेक बिचार उन्नति कुमति सब यामें जरै ।
हिन्दी प्रदीप प्रकाशि मूरखतादि भारत तम हरै ॥

जि० २८ सं० ११ } प्रयाग { नोवेम्बर सन् १९०६ ई०

पं० बालकृष्ण भट्ट सम्पादक और प्रकाशक की आज्ञानुसार
पं० रघुनाथ सहांय पाठक के प्रबन्ध से
यूनियन प्रेस इलाहाबाद में मुद्रित हुआ

सभायें पुस्तकालय और विद्यार्थियों तथा असमर्थों से अग्रिम १॥≡)
समर्थों से मूल्य अग्रिम ३।=) ——०*०—— पीछे देने से ४।=)

पिछले अङ्कों की पूरी जिल्द फी जिल्द मै पोस्टेज ३)

——:००:——

जि०.२८ } प्रयाग { नोवेम्बर
सं० ११ } { सन् १९०६ ई०

ऋण हत्या नमुच्यते ॥

जितने प्रकार के पाप और जितनी हत्या हैं सबों का प्रायश्चित्त और उनके छुटने का उपाय हमारे शास्त्रों में लिखा है पर ऋण हत्या को कहा यह नहीं छुटती। शास्त्र प्रवर्तक ऋषि कोई साधारण मनुष्य न थे बड़े अनुभवी थे, बहुत कुछ अनुभव के उपरान्त उन्हों ने यह निश्चय किया है जो बहुत ही ठीक मालूम होता है-जितना ऋण हो सब चुकता कर डालो कुछ हिस्सा ऋणका चुकता होनेसे बच रहे और उसकी ओर से बेफिकिर होबैठो तो थोड़े दिनों में वह ऋण फिर उतनेहीके लगभग

हो जायगा—लोगों का यह कहना भी कि ब्याज घोड़े की दौड़ दौड़ता है बहुत ठीक है—भारत पर इस समय १३८७६६६००० का ऋण है, आरम्भ में कईबार ऋण लेनेके उपरान्त भारत गवर्नमेंट पर नाममात्र को थोड़ा सा ऋण था तबसे बराबर ऋण पर ऋण खुलताही गया और घोड़ेके दौड़ का ब्याज भी वढ़ता गया अन्त को यह ऋण इस समय अब इस छोर को पहुंच गया। अकबर और शाहजहां के समय में कर्ज़ की कौन कहै उन्हों ने २४ करोड़ रुपया खज़ाने में छोड़ इस दुनियासे कूच किया था। औरंग ज़ेब ज़ालिम मशहूर था पर देश उस्के समय में भी जैसा रंजा पुंजा था और जैसी खुश खुर्रमी छाई थी वह अब आगे को कौन आशा है कि हमको कभी मयस्सर होगी जब इतना रुपया कर्ज़ भारत के सिरे मिढ़ा हुआ है—इतना तो भारत गवर्नमेंट देनदार है बिलाइत में जो कर्ज़ हिन्दुस्तान के ज़िम्मे है वह अलग है, उस्से इस ऋण से कोई सरो कार नहीं है। कर्मचारी गण हमें हंसते हैं और हमारी इस बेअकिली पर पछताते और अफसोस करते हैं कि यह उजालेसे अन्धकार की तुलना कर रहा है, वर्तमान सभ्य शासन का मुकाविला पुराने समयके मुगलों के असभ्य शासनसे करना कैसी भूल है जिस्में अत्याचार अपने हद्द को पहुंचा था। मालूम होता है इस्की अकिल कहीं चरने चली गई क्या ? ऋण है बला से भारत का शासन इस समय सभ्य शासनमें गिना जाता है। तो उचित है इस सभ्यता के शासन को शहद में पोत चाटा करैं। असंख्य धन का इतना ऋण होगया कुछ चिन्ता नहीं जो उसके चुकता होजाने की आगे को कोई उपाय देखने में आती या उस ऋण से भारत का शुद्ध उपकार हुआ होता। किन्तु अधिकांश इस ऋण का इंगलेंड और इङ्गलिश जाति के लोंगों की भलाई से संबन्ध रखता है, भारत की यदि कोई भलाई हुई है तो वैसाही जैसा खेत सीचनेमें गेहूं के साथ ही साथ बथुआ भी सिच जाता है-अथवा तत्व कथनमें यदि कोई दोष न समझा जाय तो यों कहना चाहिये, कि इतने रूपये का अधिकांश इंगलेंड

और वहां के लोगें की भलाई में समर्पण होचुका। तभी तो इंगलैंड इस समय परम उन्नति की दशा को पहुंचा हुआ है और हिन्दुस्तान में सोने का ढेर भी राख होगया। अस्तु हत्या अन्तको हत्याही है जो कभी छूटेही गी नहींइ-तना ऋण होने पर भी हमारी भारतीय प्रजा का कुछ नहीं बिगड़ा। अभी चार बर्ष यहां का रुपया बाहर जाना बन्द हो जाय देश धनधान्य से पूर्ण होउठे पर सो काहेको कभी होगा विदेशियों का जो दांत बूड़ा हुआ है कि वे कभी छोड़ैंगे। हमें असभ्य अर्द्ध शिक्षित कहते जाते है और चपत मार धन भी ढोये लिये जाते हैं। सभ्यता और न्याय की कसौटी है पर किस्की सामर्थि कि मुह खोल सकैMight is right।

—:o:—

मरज़ बढ़ता गया ज्यों २ दवा की

विलाइत में हिन्दुस्तान का रूपया बराबर खिचा जाता है यह एक ऐसा "मर्ज़ मुलहिक" असाध्य रोग है कि इस्की ज्यों २ दवा की जाती है त्यों २ यह रोग बढ़ता ही जाता है। कानग्रे स में बड़े २ रिज़ोल्यूशन प्रति बर्ष पास किये जाते हैं, कलकत्ते की पत्रिका सरीखे समाचार पत्रोंने इस्के बारे में अपनी ओरसे कुछ नहीं छोड़ रक्खा जिसे न लिखा हो और गवर्नमेंटसे अपने इस दुःखका निवेदन न किया हो-बड़े लाट की कौंसिलके देश हितैषी मेम्बर न जानिये कै बार कै तरह पर इसका उद्घाटन कर चुकें-पवलिक मीटिंग और डिबेट में इसका बिचार और इसपर बाद विवाद हुआ ही करता है-बायकाट और स्वदेशी आन्दोलन का तो लक्ष्यही यह है। कम्पनी के राज्यकाल में लोग कहते थे ये विलाइत के बनिये हैं बनिये रुपये के लोभी होते हैं इसी से देश का रुपया खिचा जाता है। वहांका राजा जब अपने हाथ में भारत का शासन लेगा तो फिर यह शिकायत न रहैगी। सन् सत्तावन के बड़े बलवे के उपरान्त सो भी हुआ महाराणी ने राज्य अपने हाथ में लिया पर हमारे इस

मर्ज़ में किफायत की कौन कहे अधिकतर बढ़ती होती गई। उदार भाव पूर्ण मिस्टर मारली का मंत्रिपदाधिस्ठान इस असाध्य रोग की दवा का ओर था सो भी देख लिया गया। विलाइत के नीति कुशल जुदाही अपनी पालिसी से नहीं चूकते नये २ काइदे और कानून गढ़ निपट भोंदू दास शांत और सुस्त तथा सरल चित्त यहां के लोगोंको फुसलाया करते हैं "तुम ऊबो मत सुसभ्य शासन से शासित होरहे हो विद्या वृद्धि करते रहो सभ्य बनते चले जाओ कुछ दिनों में अपना शासन अपने आप करने लगो गे"–हम पुकार २ कह रहे हैं हमें सभ्य शासन न चाहिये विद्या जितनी हमें पढ़ाई गई बहुत है अब हम अपने आप अपने को विद्वान् कर लेंगे। सभ्य भी नहीं हुआ चाहते जैसा अब तक रहे हम असभ्य रह पागुर करते हुये चैनसे ज़िन्दगी काटते यदि इस मर्ज़से हमारी रिहाई हो गई होती। निरे निस्किंचन परम दरिद्री सभ्यही हो हम क्या करेंगे? हरएक बहाने हमे फुसलाते और बहलाते जो हमारा रुपया खिचा जाता है सो नही हम सच पा चुके। सो इस चिउंटिया ढोअन के घटने की कौन कहे प्रत्युत विलाइत की जन संख्या के साथ ही साथ बढ़ती जाती है और न कोई आशा है कि यह कभी घटै गी। क्योंकि विलाइत वाले जो हिन्दुस्तान के साथ छोह करें तो उनकी जीवन यात्रा भी न चले "खाद्यखादकयोः प्रीतिर्विपत्तेः कारणं महत्" भारत की नस २ ढीली पड़ गई पड़ा २ कांख रहा है किन्तु इस असाध्य रोग से अब भी इसका गला नहीं छुटता। जितनाही इलाज किया जाताहै उतनाही रोग बढ़ता जारहा है इसीसे कहते हैं "मरज़ बढ़ता गया ज्यों २ दवा की"

—::—

रमादेवी।

ललना कुल को गैारव देने वाली यह हमारी एक सजातीया उच्च कुल की कन्या थीं, तुलसीकृत रामायण तथा अन्यान्य देवनागरी भाषा

की पुस्तकों में इन्हे अच्छा अभ्यास था हिन्दी की पूर्ण पण्डिता थीं थोड़ा संस्कृत भी जानती थीं। जब यह अपनी पूरी यौवन अवस्था में थीं उस समय एक बालक और एक कन्या छोड़ पति ख्रीष्ठ मत स्वीकार कर विधर्मी होगया था। इनको अपना साथी बनाने में पति ने इन्हे सब तरह की लालच दिखाया और बहुत कुछ इनका पीछा किया पर यह अपने धर्म में पूरी दृढ़ रहीं। क्रिश्चन होने पर फिर पतिका मुख इन्हों ने न देखा बड़े २ दुःख सह अपने चरित्र तथा धर्म की रक्षा में सदा दृढ़ रहीं। एक बात यह इनकी अति प्रशंसनीय है कि जिन अमीरों के घर इन्ही के घराने की तथा इनकी समान जातीया और समान वयस्का स्त्रियां सेवावृत्ति कर बड़ी बेकदरी से कदर्यता प्रगट किया करती थीं वहीं ये उन्हें शरम दिलाते अध्यापिका बन चरित्र पालन क्या है इसका नमूना होते सदा पूज्य बनी रहीं। जिन अमीरी घरानो में Corruption कुचरित्र दुराचार और दुर्वृत्त तिलेषुतैलम् दधिनिसर्पि सदृश व्याप रहा है वहां चरित्र क्या चीज़ है और कैसे उसकी रक्षा होसक्ती है यह उन्हे बतलाना और अपने सदुपदेश से स्त्रियों को भली राह की ओर झुका लाना इन्हीं की बिशाल बुद्धि का काम था।

६५ बर्ष की उमर में १६ सितम्बर को यह सुरधाम सिधार गईं पर सतीत्व धर्म में दृढ़ता का उदाहरण अपने पीछे छोड़ गईं। हमारे समूह वाले कदर्यों के पेशवा, जिन की प्रगट में भिक्षा वृत्ति है पर भीतर से कुबेर की संपत्ति को भी लात मारते हैं, अपनी स्त्रियों से कहते कि तुम भी रमा देवी का अनुकरण क्यों न करो क्यों भिखारिने बन बड़े २ घरानो में सबेरे से सांझ तक सेवा टहल कर कदर्य बनती हो तो कितना आत्म गौरव बढ़ता जाता। किन्तु बिना मेहनत दान दक्षिणा का धन खाते २ बुद्धि इन कदर्यों की ऐसी कुण्ठित होगई है कि इन्हें यह ज्ञान ही न रहा कि सभ्य समाज में हमारी इस बह्मनई की कितनी निन्दा और हिकारत है। जिन के पूर्ब पुरुष देश के देश को अपनी मूठी में किये थे लोभ के पुंज उनके वंशधर धनियों की

फिटकार सहते हुये भी केवल दक्षिणा पर निर्भर रह कर चरित्र और विद्या दोनो से शून्य हो लुंज पुंज बन बैठे लाचारी है॥

——:०:——

बनस्पति बिबरण

यों तो इस पृथवी पर न जानिये कितने आश्चर्य पैदा करने वाले पदार्थ हैं जिन से ईश्वर की ईश्वरता प्रगट होती हैं पर बास्तव में अचरज पैदा करने वाले पदार्थ हम उन्ही को कहैंगे जिस में प्रकृति के नियम से संबन्ध रखने वाली नित्य के देखने की बस्तु ओं के लक्षणों से कुछ ऐसे भिन्न लक्षण पाये जांय जो हमारी बुद्धि में न आसकें। पाठक आपने संसार के सात आश्चर्य Seven wonders of the world सुना होगा क्या संसार में बस सातही पदार्थ अचरज के हैं? इनमें ताज बीबी का रौज़ा भी एक है तो क्या ताज महल के पत्थर तो तअज्जुब दिलाने वाले हैं और आप के घर के दासे का पत्थर नहीं है ? क्या बैबीलोन का लटकना उद्यान Hanging garden of Balylon अचरज के पदार्थों में है आपकी गली में उगी हुई हरी दूब नही है ? थोड़ा भी ध्यान देने से मालूम हो जायगा कि प्रत्थर व दूर्वा रौज़ा या अधर उद्यान से कहीं बढ़ कर अचरज पैदा करने वाले हैं। ईश्वर की रचना का भेद पाजाना कठिन होने पर भी यह द्विपद जीव अर्थात् मनुष्य जो ईश्वर का आश्रित है और जिसे ईश्वर ने अपनेही रूप में सृजा है अर्थात् ज्ञान शक्ति दी है, अपनी ढाई चावल की खिचड़ी अलग ही पकाता हुआ ईश्वर की ईश्वरता का भेद खोलने के लिये उद्योग कर रहा है अस्तु। इसी के अनुसार आज हम ईश्वर के कारखाने में टांग अड़ाते कुछ चमत्कृत चीज़ों का उल्लेख करते हैं। संसार में दो तरह के पदार्थ एक जंगम या सजीव दूसरा स्थावर निर्जीव या एक जड़ दूसरा चैतन्य है। जड़ कहां तक सजीव है सो

फिर कभी कहेंगे आज वनस्पति के संबन्ध में कहते हैं जो जड़ कोटि में गिने जाते हैं-

प्रत्येक वृक्ष के ३ भाग होते हैं एक धड़ जो पृथवी के ऊपर थोड़ी दूर सीधा उठ कर फिर डालियों में विभक्त हो हवा में फैल जाता है-दूसरा जड़ जो पृथवी के नीचे चारो तरफ फैली रहती है-तीसरे पत्तियां जो डालियों के किनारों से निकल कम व बेश चौड़ी होकर हवा में लहराया करती हैं-इन तीनो भागों की बनावट और काम अलग २ हैं सो नीचे लिखे जाते हैं

डालियों व धड़ की बनावट

कोई डाली को आरी से आड़ी काटने पर उसमें तीन भाग दृष्टि पड़ेंगे बीचो बीच में गूदा इसके चारो तरफ एक जालदर झिल्ली सा दृढ़ काष्ट और फिर त्वक् या छाल जो पहले के दो भागों की बाहरी चोट आदि से रक्षा करती है। गूदे में बहुत ही छोटे कोष्ट (Cells) होते हैं जो मज्जा सन्वधी आड़ी नलियों द्वारा और बाहरी छाल द्वारा हवासे समागम पैदा करते हैं। झिल्लीदार काष्ट और छाल के भीतरी भाग में लंबी खड़ी नालियां होती हैं जिन में से तरल (Liquid) पदार्थ जड़ से पत्तियों और पत्तियों से जड़ तक आ और जा सकता है

जड़ की बनावट।

जड़ धड़ से छूटते ही मिट्टी में चारो तरफ फैल जाती है इसकी थोड़ी दूर तक की बनावट धड़ही के समान होती है पर जड़ के ज़रा अधिक लंबे होने पर गूदे का उस्मे से लोप होजाता है जड़ मोटी से क्रमशः पतली और दृढ होती जाती है। जड़ के सिरे बहुत ही पतले सुफैद रंग छिद्र युक्त स्पंज की तरह होते हैं। इनमें धड़के तीनों भाग का लोप हो केवल एक नरम पदार्थ रह जाता है जिसमें काष्ट व खाल की खड़ी

नलियां आ मिलती हैं। इन्ही नलियों के द्वारा यह तंतु रूप में पृथवी में गड़े हुए भी हवा में हिलती हुई पत्तियों के साथ मेल खाते हैं॥

पत्तियों की बनावट।

टहनियों का बिस्तार पत्तियां हैं पत्तियों में चारो तरफ फैली बहुत सी शिराएं या नसे हैं यही जालदार काट का विस्तार है यह भीतरी छाल के बिस्तार की नलियों से जो प्रायः इन के नीचे रहती है जुड़ी रहती है। एक पतला अस्तर इन शिराओं के ऊपरी और नीचे के हिस्सों को आच्छादित रखता है। यह अस्तर छाल के बाहरी अथवा कोष्टिक (Cellular) भागका बिस्तार है और सछिद्र रहता है ये। छिद्र (Stoma) बहुत ही छोटे और असंख्य होते हैं यही वृक्ष के मुख और आखें इत्यादि हैं। एक बर्ग इन्च में प्रायः १२०००० छिद्र होते हैं जो वनस्पति केवल जल में उगते हैं उन्हें छोड़ स्थलज उद्भिजों के पत्तों में ऊपरी भाग की अपेक्षा नीचे के हिस्सों में अधिक छेद रहते हैं।

बृक्ष के प्रधान भागों के कर्म।

जड़ के कार्य्य—जड़ पानी और तरल खाद्य बस्तुओं के लिये मिट्टी में चारो तरफ तन्तु या प्ररोह को फैलाती है स्पंज सदृश जड़ का भाग जिसका ऊपर वर्णन हो चुका है पानी व खाद्य बस्तु को चूस कर काष्ट की खड़ी नालियों द्वारा इनको ऊपर भेज देता है यह खाद्य बस्तु पेड़ के रस में मिल जाती है और चारो तरफ घूमा करती है। इसी से जड़ पेड़ का अंश बनता है। जड़ पेड़ का पेट के रूप में है।

पत्तियों के कर्म-पत्तियों और जड़ के काम एकही तरह के हैं अर्थात् पोषणोपयोगी रस को तैयार करना। भेद केवल इतना ही है कि जड़ तो तरल (Liquid) और पत्र (Gaseivs) द्रव्य खीचते हैं। पत्ते पेड़ों के श्वास यन्त्र स्वरूप हैं, प्रयोजनीय तरल पदार्थ का परिशोषण और निकम्मे पदार्थों को भाफ रूपसे बाहर निकालना पत्तों

का मुख्य कार्य है । दिन में हरी पत्तियां आंगारिकाम्ल (Carbonic acidgas) खोलती और अम्लजान (Oxygen) बाहर निकालती हैं अर्थात् कोयला (corbon) खाकर पेड़ को पुष्ट करती हैं। रात को यह कार्य विपरीत होता है आंगारिकाम्ल निकालती है यह वायु प्राणियों के लिये हानिकारक है इस से रात को पेड़ के तले न सोवे। नये हरे पौधों की डालियों में और घास के हरे डंठल में भी छिद्र रहते हैं जिनके द्वारा आंगारिकाम्ल (Corbonic acidgas) भीतर जाती है क्योंकि यह समय शीघ्र बढ़ने का है और बढ़ाव के लिये अंगार कोयला (Corbon) की आवश्यकता रहती है, पीले अथवा लाल पत्ते या पौधों का इस रंगका कोई भाग आंगारिकाम्ल निकालते हैं इसलिये यह पेड़ को हानिकारक हैं। एक दूसरा काम पत्तों का पानी को भाफ रूप में बाहर निकालना है। एकफसल में एक एकड़ भूमि से ३७५०० से ६२५०० मन तक पानी निकलता है॥

धड़ व डालियों के कर्म-धड़ की खड़ी नालियां वृक्ष रस (Sap) को पत्ती में पहुंचाती हैं यहां यह रस पत्ती की शिराओं के द्वारा फैल जाता है फिर रस जब आंगारिकाम्ल सोख भाफ निकाल कर गाढ़ा व परिपक्क हो जाता है तो पत्तों के नीचे वाली नसों के द्वारा छाल की भीतरी नालियों में आ जाता है। रास्ते में छिद्रों से वायु सोखता निकालता है, धड़ में की नालियों में घूमता हुआ फिर जड़ में पहुंच जाता है जहां जड़ से सोखे तरल द्रव्य में मिल फिर ऊपर चढ़ जाता है।

सिवाय सर्दी के सब ऋतुओं में यह रस चारो तरफ घूमा ही करता है यह मनुष्य के खून के तरह है। जैसे मनुष्य के शरीर मे खून से मांस च रबी इत्यादि बनता है वैसेही इस रस से पेड़ का गूदा गोंद इत्यादि बनता है। पेड़ से और जीव से कितनी समता है। पेड़ों के भी प्राण हैं उन्हें भी आघात लगता है बीमारी होती है इत्यादि। शेष फिर

एल.-एन.-नागर

——

भारत के भावी सुदिन।

सृष्टि कर्ता अपनी सृष्टि को सदा एकही ढंग पर नहीं रहने देता अवश्य इसमें कुछ न कुछ परिवर्तन हुआ करता है और इस परिवर्तन को कालचक्र कहते हैं-यह कालचक्र चक्कर खाता हुआ क्या किया चाहता है इस को समझना सहज नहीं हैं-कुछ दिन पहले यहां के लोगों का यही खयाल था कि हिन्दोस्तान ही नहीं वरन एशिया भर में कभी कोई देश उन्नति न कर सकैगा-किन्तु कालचक्र की प्रेरणा से इधर कुछ ऐसी २ घटनायें हुईं जिस्से अनुत्साह पैदा करने वाला यह खयाल अब लोगों के चित्त से जाता रहा और आशा होने लगी कि हम लोग भी अब कुछ करतूत कर दिखावैंगे--अभी तक विलायत के लोगों के मन में यही समाया था कि काले आदमी Coloured race को ईश्वर ने गुलामी ही के लिये सृजा है पर हाल में जापान के सत्पुत्रों ने यह स्पष्ट कर दिखा दिया कि काले आदमियों में अभी शासन करनेकी शक्ति विद्यमान है।

जापान ने जो कुछ उन्नति की है कौन नहीं जानता वरन जापान को उदाहरण में रख चीन और फारस देश में भी जातीय सभायें Natioual assembilies स्थापित होगई हैं, चीन के ५०० विद्यार्थी जापान में युद्ध शिक्षा पा रहे हैं-ऐसे तरक्की के ज़माने में भी अबतरी के हालत में पड़ा हुआ अगर कोई देश है तो हिन्दुस्तान ही है-जो महाभारत के समय तक पृथ्वी भर का शिरोमणि, समस्त सुसभ्य देशों का शिक्षा गुरू और अगुवा था वह अब ऐसी दीन दशा में आगया है कि इसकी अवस्था अब सब भांत शोचनीय है-पर काल चक्र जो नीचे को ऊंचा और ऊंचे को नीचा बात की बात में कर देता है इस ओर भी अपनी सौम्य दृष्टि फेरा है-डेढ़ साल पहले क्या कभी चित्त में आता था कि यहां के लोगों में भी जोश पैदा होगा, बीस वर्ष से कांग्रेस होता है पर कोई बिशेष फल देखने में न आया-भूत पूर्व लाटकर्ज़न महोदय ने कुछ ऐसी कल उमेठी कि लोगों में स्वदेशी का जोश आप से

आप आ समाना आशा होने लगी कदाचित् अचरज क्या कि इस गिरे हुये भारत का भी पुनः अभ्युत्थान हो और अन्य सुसभ्य देशों की भांति यह भी कुछ कर दिखावै-चीन और फारस को तरक्की करते देख मिस्टर स्टेड ने अपने पत्र Review of reviews में लिखा है कि जब आस पास के देश तरक्की कर रहे हैं तो भारत तरक्की की दौड़ में क्यों पीछे पड़ा है ? हम मिस्टर स्टेड को इस हितैषिता के लिये धन्यवाद देते हैं और अपने पाठकों को सूचित करते हैं कि स्वदेशी अभी केवल थोड़े से पढ़े लिखे लोगों में व्यापा है अपढ़ों में इसका असर बहुतही कम पाया जाता है तौभी इस स्वदेशी का असर जैसा १ बर्ष में भया कदाचित् १०० बर्ष में भी होना संभव न था और यह सब उसी कालचक्र की प्रेरणा का परिणाम है-बंबई के कपड़ों की मिलैं जिनका अभीतक बड़ी कठिनाई से काम चलता था इस बर्ष स्वदेशी आन्दोलन के कारण १४ करोड़ के फायदे में रहीं यदि यह स्वदेशी आन्दोलन न हुआ होता तो निश्चय यह रकम विलायत के बनियों के पेट में गई होती ॥

स्वदेशी को गवर्मेंट भी अच्छा समझती है। दूरदर्शी वाइसराय लार्ड मिन्टो और मदरास के गवर्नर तथा और २ कर्मचारियों ने भी अपनी सहानुभूति इससे प्रगट की है-हां थोड़े से स्वार्थी और संकीर्ण हृदय के कर्मचारी भी हैं जिन्हें यह आन्दोलन पसन्द नहीं है इस लिये कि उनके देश के जुलाहे और कारीगरों को इससे हानि पहुंचती है-पर यह उनकी ना समझी है यह तो एक दिन होनाही था एक पर्दा सा पड़ा था ईश्वरेच्छा कुछ ऐसी हुई कि सहसा यह आंख के सामने से उठादिया गया-यही नहीं कि स्वदेशी से भारत को करोड़ों रुपये साल की बचत हो वरन सरकारी इन्तिज़ाम में भी इससे उपकार पहुंचता है-बंगाल की पुलिस रिपोर्ट से विदित होता है कि उस प्रांत में गत बर्ष Crime चोरी चखारी बहुत कम भई कारण इसका यही है कि लोग जो भूखों मरते थे अपने २ घरों में Hand loom ले कर कालक्षेप करते हैं बहुत से जुलाहे

और कारीगर जिनका काम बंद होजाने से खेती तथा गुलामी करते थे अब अपने २ काम में फिर लग गये हैं अब इस समय इसकी बड़ी ज़रूरत है कि गोखले ऐसे पुरुष स्वदेश के हर एक प्रांत में पैदा हो सचे जी से देश सेवा के काम में तत्पर हों-अस्तु आसार तो ऐसेही देखे जाते हैं जिस से दृढ़ आशा है कि भारत के भावी सुदिन जल्द आने वाले हैं यदि काल-चक्र का चक्कर भी ऐसाही हमारे अनुकूल रहै। इत्यलमतिपल्लवितेन ॥

मूलचन्द

--:o:--

नये २ कारखानों की फिहरिश्त जो स्वदेशी आन्दोलन से खुले हैं

स्पिनिङ्ग वीविङ्ग मिल लाहौर — २ लाख
पाइनियर हेराल्ड लूम वीविङ्ग कम्पनी जलन्धर — ५० हज़ार
इण्डियन गुड्स डिपो अहमदाबाद — १ लाख
कृष्णा डाइङ्ग (रङ्गकी मिल) ट्रेडिङ्ग ऐण्ड वीविङ्ग कम्पनी बाड़ नगर — ५० हज़ार
फिनले मिलस कम्पनी बम्बई — २० लाख
स्वदेशी कोआपरेटिव स्टोर्स कम्पनी बम्बई ३ लाख — २५ हज़ार
पाटनकर कम्पनी बम्बई — १ लाख
आल इण्डिया इन्श्योरन्स कम्पनी बम्बई — ५० लाख
भास्कर टेक्नो काटन मिल बम्बे — १० लाख
दियासलाई का कारखाना बम्बई — १ लाख,
आटे की मिल शोलापुर — ५० हज़ार
इण्डियन् कोआपरेटिव सोसायटी बम्बई — १ लाख
स्पिनिङ्ग और वीविङ्ग मिल बारसी — १० लाख

प्रताप स्पिनिङ्ग वीविङ्ग कम्पनी अमलनेर	१० लाख
साहा स्टीम नेविगेशन कम्पनी बम्बई	३८ लाख
बैङ्क आफ इण्डिया बम्बई	१ करोड़
साहा छत्रपति स्पिनिङ्ग वीविङ्ग कम्पनी कोल्हापुर	१५ लाख
चीनी का कारखाना आबू	५ लाख
बरहानपुर ताप्ती मिल	१२ लाख
स्वदेशी मिल पूना	२ लाख ५८ हज़ार
गया जी सुगर वर्क्स गनाढ़ी	३ लाख ५० हजार
स्टीम नेविगेशन कम्पनी बम्बई	६० लाख
स्वदेशी बङ्क बम्बई	१ लाख
साबुन का कारखाना बम्बई	१ लाख
बैङ्क आफ वेस्टरन् इण्डिया बम्बई	२५ लाख
चीनी का कारखाना हैदराबाद	१ लाख
चमड़े का कारखाना मदरास	१ लाख
यूनइटेड लैफ इंश्योरन्स	१ लाख
इण्डियन नेशनल ट्रस्टी एसोसियेशन लाहौर	५ लाख
सेण्ट्रल स्पिनिङ्ग वीविङ्ग कंपनी अकोला	१ लाख ५० हज़ार
सायराहफिक इण्डस्ट्रियल एसोसियेशन कलकत्ता	२ लाख
प्रिण्टिङ्ग पबलिशिङ्ग कंपनी दिल्ली	५ लाख
इण्डस्ट्रियल बैङ्क लुधियाना	५ लाख
एण्ड्रयूल कंपनी कलकत्ता	
भारत हितैषी स्पिनिङ्ग वीविङ्ग मिल कलकत्ता	१० लाख
इण्डियन् स्पिनिङ्ग वीविङ्ग मिल कलकत्ता	१० लाख
लक्ष्मी काटन् मिल श्रिरामपुर	१२ लाख
देशी कारोबार कंपनी इलाहाबाद	५० हज़ार
तिपरा स्पिनिङ्ग वीविङ्ग मिल बङ्गाल	१५ लाख

चिटागाङ्ग स्वदेशी स्टीम तूतीकोरन १५ लाख
हाथरस स्वदेशी स्टोर १२ लाख
स्वदेशी वीविङ्ग कंपनी अमृतसर ५० हज़ार

इनके अलावा दो वीविङ्ग मिल चन्दर नगर में और दो साबुन का कारखाना बङ्गाल में, स्वदेशी स्टोर और लक्ष्मी भाण्डार कलकत्ता मे, शोलापुर मिल, मिल्स इन बरोदा स्टेट, हैण्डलूम वीविङ्ग कंपनी शोलापुर, लूम और इण्डस्ट्रियल मेशीन वर्क बेलगांव, इत्यादि खुली हैं।

--:०:--

अलमस्ती का एक चित्र

कोइ दिन दूध मलाई ताजी, कोइ दिन सूखी रोटी भाजी।
कोइ दिन कन्द मूल फल राजी, कोइ दिन बिना अहार॥ १
कोइ दिन घाम प्यास हैरानी, कोइ दिन जाड़ा जटिल हिमानी।
कोइ दिन सुखद नींद मन मानी, कोइ दिन पड़ती मार॥ २
कोइ दिन प्रेम पन्थ के योगी, कोइ दिन राजा पण्डित भोगी।
कोइ दिन कुली व काहिल रोगी, कोइ दिन अपढ़ गवांर॥ ३
कोइ दिन टमटम घोड़ा गाड़ी; कोइ दिन नगर दीप घर झाड़ी।
कोइ दिन सभा समुन्दर खाड़ी, कोइ दिन कारागार॥ ४
कोइ दिन धोती भट्टी मोटी, कोइ दिन पैंट व पगरी छोटी।
कोइ दिन बलकल पत्ती खोंटी, कोइ दिन नंगे यार॥ ५
जग झंझट का देख बहाना, रोना हसना आना जाना।
लोचन ध्यान न इन पर लाना, करना देश सुधार॥ ६

लोचन प्रसाद

मन रमाने वाली गप्य ।

किसी डाकृर के पास एक घड़ी बहुत दिनों से पुश्तैनी थी जब २ बिगड़ती तब २ एक घड़ीसाज़ से जो उसका बंधा ग्राहक था मरम्मत करवा लेते थे-मरम्मती घड़ी कब तक चल सक्ती है। एक बार घड़ी के विगड़ने पर बनाने को दिया दो चार दिन चल कर रुक गई, घड़ी साज़ ने घड़ी के बनवाई की बिल भेजा डाकृर साहब बड़े तैश में आय घड़ी उसके सामने पटक कर बोले। घड़ी की बनवाई में घड़ी ही लेजाओ-घड़ी साज़ बेचारा घड़ी लै चुपचाप चला गया । इत्तिफाक से घड़ीसाज़ की बूढ़ी नानी बीमार पड़ी डाकृर साहब का इलाज शुरू हुआ अपनी विज़िट का रूपया डाकृर साहब बिलपर रोज़ २ चढ़ाते जाते थे। अचानक घड़ी साज़ की वह बूढ़ी नानी मरणासन्न होगई डाकृर चन्द्रोदय दे २ उसे जिलाते थे पर ऐसा मरीज़ कब तक चल सक्ता है प्राण पखेरू शरीर पंजर से अलग हो उड़ गया । डाकृर ने विज़िट का रूपया अदा करने को बिल भेजा। घड़ी साज़ बूढ़ी नानी का मृतक शरीर अर्पण कर बोला। फीस के बदले इसी को ले जाइये। डाक्टर यह सुन बड़ा लज्जित हुआ और फिर विज़िट का बिल अदा करने को उस से न कहा ॥

फ्रान्स की राजधानी पेरिस में साइन बोर्ड का बहुत ही प्रचार है और साइन बोर्ड के तर्ज़ से दूकान अधिक चलती है इस लिये दूकानों के आगे नये तर्ज़ का साइन बोर्ड टांगना एक फेशन में हो गया है। इसी नये तर्ज़ की धुन में एक बार एक दूकानदार ने गदहे का सिर बनवा The ass अर्थात् गदहा ऐसा लिख दूकान के आगे टांग दिया। टांगतेही बेहद्द बिक्री होने लगी और वह बड़ा मालदार होगया। जब लक्ष्मी का अधिक प्रादुर्भाव होता है तो छोटी २ बातों की पर्वाह लोगों

को नहीं रहजाती दिमाग बढ़ जाता है। कुछ दिन बाद उसने गदहे का सिर निकलवा के फेंक दिया और वह सिर परोस के एक दूकानदार के हाथ लग गया उसने उसे अपनी दूकानमें टांग दिया। गांहक वही दूकान समझ उसी की दूकान पर जाने लगे अपने यहां एक गाहक न आते देख उसने एक वैसा ही सिर और बनवाय टांग कर उस पर The real ass या असली गदहा लिख टांग दिया। पहले तो खाली "गदहा" था पर इस बेवकूफी से अब "असिल गदहा" हो गया ॥

—:o:—

हिन्दुओं के नाम।

हिन्दी प्रदीप की किसी संख्या में नाम की कल्पना देख मुझे भी कुछ लिखने की इच्छा हुई है। आपने पहिले इसके सम्बन्ध में क्या लिखा है सो तो मुझे याद नहीं पर यह निश्चय है कि यह शब्द संसार में फैल रहा है। संसार में ऐसी कोई बस्तु नहीं है जिसका कुछ नाम न हो। यह सत्य है कि नामधारी ब्यक्ति सदा नहीं रहता अवश्य नाशवान् है इस शरीर के नाश होने पर भी अदृष्ट नाम का नाश नहीं होता। भगवान् के औतारों को ऋषि महर्षियों को बड़े राजाओं को हुये हज़ारों लाखों बर्ष बीत गये परन्तु उनका नाम कानमें पड़तेही वे हमारी आंख के सामने आ खड़े होते हैं। मिस्टर जान मारली विलाइत के इण्डिया आफिस में बैठे ३० करोड़ भारत बासियों को अपनी अंगुलियों पर नचाते हैं हमने उन्हें कभी देखा नहीं पर उनका नाम सुनते ही जान लेते हैं। आपके हि० प्र० को मैं २० बर्ष से पढ़ता हूं आपका नाम बर्षों से सुनता रहा परन्तु बम्बई के कानग्रेस पण्डाल में जब तक पण्डित श्रीकृष्ण जोशी ने आप का नाम न बतलाया तब तक मैं आप को न पहचान सका। गोस्वामी तुलसी दास जी ने नाम की महिमा में भगवान् मर्यादा पुरुषोत्तम राम चन्द्र जी के नामों का गुण बर्णन करते हुये लिखा है।

देखिय रूप नाम आधीना । रूप ज्ञान नहिं नामबिहीना ॥
रूप विशेष नाम बिनु जाने । करतल गत न परहि पहिचाने ॥
सुमिरिय नाम रूप बिनुदेखे । आवत हृदय सनेह विशेखे ॥
चहुं युग चहुं श्रुति नाम प्रभाऊ । कलि बिशेष नहिं आन उपाऊ ॥
राम भक्त हित नर तनु धारी । सहि संकट किय साधु सुखारी ॥
नाम सप्रेम जपत अनयासा । भक्त होंहि मुद मंगल बासा ॥
राम एक तापस तिय तारी । नाम कोटि खल कुमति सुधारी ॥
भंजेहु राम आप भव चापू । भव भय भंजन नाम प्रतापू ॥
राम भालु कपि कटक बटोरा । सेतु हेतु श्रम कीन्ह न थोरा ॥
नाम लेत भव सिन्धु सुखाहीं । करहु बिचार सुजन मन माहीं ॥
नाम प्रसाद शम्भु अविनाशी । साज अमंगल मंगल राशी ॥
शुक सनकादि सिद्ध मुनि योगी । नाम प्रसाद ब्रह्म सुख भोगी ॥
नाम जपत प्रभु कीन्ह प्रसादू । भक्त शिरोमणि भे प्रहलादू ॥
ध्रुव सगलानि जपेहु हरि नामू । पाएउ अचल अनूपम ठामू ॥
सुमिर पवन सुत पावन नामू । अपने बश करि राखेउ रामू ॥
अमरं अजामिल गज गणिकाऊ । भये मुक्त हरि नाम प्रतापू ॥
कहहुं कहां लग नाम बड़ाई । राम न सकहिं नाम गुण गाई ॥

इस तरह महात्मा तुलसीदासजी ने नाम को रामसे भी अधिक बतलाया है । वास्तव में नाम का महत्व कह नाम जपने की शिक्षा मनुष्यों को दी है । बड़े तपस्वी समाधि लगाय नामी का नाम सहित ध्यान करते हैं और सच पूछो तो संसार के सब काम नाम से ही होते हैं । सज्जन अपने भले कामों से अपना नाम कर जाते हैं दुर्जनों के दुर्जनता के काम देख लोग कहते हैं इसने अपने बाप दादों का नाम डुबो दिया । नाम की लाज रखने ही को भले आदमी खोटे कामों से बचते हैं। क्या वास्तव में हमारे देश वालों को अपने नाम का आदर है ? यदि नाम ही का बिचार किया जाय तो मेरी समझमें न आजकलके ब्राह्मण ब्राह्मण हैं न क्षत्रिय क्षत्रिय हैं और न वैश्य वैश्य हैं । मैं भी आप की तरह पनारू कलवारू भोंदू

छदमी छकौड़ी और घसीटे जैसा नाम रखना पसन्द नहीं करता। मुझे भी आप के समान बंगालियों के से सुरेन्द्र उपेन्द्र रमेश इत्यादि नाम प्यारे लगते हैं परन्तु क्या आप लोगों के काम सुधारे बिनाही नाम सुधारने से हिन्दू समाज की उन्नति समझते हैं? एक गवांरू मसल है "अमर मरन्ते मैं सुने निधंनिया धनपाल-लछमी उपले बीनती अच्छा ठंठ गोपाल" एक रामचन्द्र नाम वाला फांसी पावै, दूसरा रमेश नाम धारी भीख मांगै, तीसरा धर्मपाल नाम सब अधर्म करै, तब भोंदू छदमी आदि नाम भी क्या बुरे हैं। जिन दिनों मैं श्री वेंकटेश्वर समाचार लिखता था पण्डित गंगा प्रसाद अग्निहोत्री ने अपने एक लेख में लिखा था कि अंगरेज़ी Slave "स्लेव" भी इसी तरह भले आदमियों को भी गुलाम बना देता है। जो जित जाति है वह जेताओं की दृष्टि में गुलाम ही समझी जाती है।

आज कल ब्राह्मणों की यहां तक दुर्गति है कि महाराज शब्द का अर्थ रसोईदार समझा जाता है यही बात क्षत्रिय और वैश्यों की भी है। यदि शुद्ध क्षत्रियता का जोश बचा रहता तो भारत पराधीन होता, वैश्यों में अपने देश और जाति के साथ सहानुभूति रख व्यवसाय करने की बुद्धि होती तो इस समय हमें स्वदेशी और बायकाट का आन्दोलन करना पड़ता। बस इसी तरह समझते जाइये और नाम के अनुसार काम मिलाते जाइये। हमारे नगर में एक पागल सा ब्राह्मण रहता था। वह कहता था देखो अजब तमाशा है नाम छोटे लाल और नापो तो ५ हाथ लम्बे। नाम गोरे लाल और मुंह ऐसा जिस्पर मानो तवा रगड़ दिया गया। पुराणों के समय के नामों को जाने दीजिये बाथा रावल सांगा राणा जैसे नाम इतिहासों मे एक नहीं बीसों मिलेंगे जिन्हों ने अपना नाम अच्छा न होने पर भी देश हित के कारण बड़ा नाम कमाया है। मैं तो यहां तक मानता हूं कि जब से क्षत्रियों ने अपने नाम के आगे सिंह लगाना आरंभ किया तबसे थोड़ेही ऐसे होंगे जिन्हें इस सिंह हो जाने का खयाल मन में रहता है नहीं तो उनका समूह का समूह गीदड़ होगया है। क्या आप शास्त्र पढ़ने के नाम काले अक्षर भैंस बरा-

बर समझने वाले शर्माओं को; बहादुरी में मेज़ पर चाकू से डरने वाले वर्माओं को, धन संपत्ति के बदले दाने दाने के लिये तरसने वाले गुप्तों को नहीं जानते हैं ? ऐसा कहने से मेरा यह प्रयोजन नहीं है कि लोग अपने बालकों का नाम अच्छा न रक्खें किन्तु इतना अवश्य कहूंगा कि जैसा नाम हो वैसाही काम भी हो क्योंकि नाम बड़ा दर्शन थोड़ा ही ने देश को धूलि मे मिलाया है। महाभारत के समय कुकर्म करने से ही सुयोधनका दुर्योधन और सुशासन का दुःशास नाम पड़गया। इस लिये यदि लोगों को इस तरह समाज का भय रहै तो हमारे हिन्दू भाई अनेक बुरे कामों से बच सक्के हैं। मुझे ऐसों से बड़ी घृणा है जो ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्र को गड्ड बड्ड कर नई टकसाल से जाति का नया सिक्का चलाना चाहते हैं। मेरी समझ में उचित यही है कि जो जिस वर्णमें या कुल में पैदा हुआ है उसे उस बर्ण या कुल का सपूत कहलाने योग्य बनना चाहिये क्योंकि समाज का भय जैसा आदमी को बुरे कामों से बचाता है वैसाही जातिका अभिमान और कुलाभिमान भी। लज्जाराम शर्म्मा

प्राचीन ग्रन्थकार

मङ्ख

ये महाशय कश्मीर निवासी प्राचीन कवि हैं। इनके रचित ग्रन्थ का नाम श्री कण्ठ चरित है जिसमें प्रारम्भ में बन्दना फिर सज्जन तथा खलों का स्वभाव वर्णन आदि बहुत अच्छी रीति से लिखा है। बूल्हर साहिब का मत है कि मङ्ख कवि श्री कण्ठ चरित को सम्भवतः सन् ११३५ ई० से लेके सन् ११४५ ई० तक के बीच में रचा होगा। निदान मङ्ख कवि ख्रीष्टीय १२ वीं सदी के पूर्वार्द्ध के व्यक्ति सिद्ध होते हैं। अलङ्कार सर्वस्व के रचयिता रूय्यक जिनका समय लोगों ने सन् ११२० ई० अनुमान किया है इन्हीं मङ्ख के गुरू हैं। ये कश्मीर के महाराज जय सिंह के सभासद थे। इनके एक भाई का नाम अलङ्कार था जो कश्मीर राज के मुख्य मन्त्री थे और दूसरे शृङ्गार थे जिसने जयसिंह के पिता की हर्ष

देव के साथ युद्ध करने में सहायता की थी। बूलहर साहिब ने मङ्ख के सम सामयिक कबियों के नाम भी दिये हैं जिनमें से कई एक सुप्रसिद्ध वैयाकरण और दार्शनिक हैं। मङ्ख प्राचीन कबियों में हैं पर इनकी कबिता वैसी चमत्कृत नहीं है जैसा कालिदास माघ और भारवि आदि की है यही कारण है कि सर्वसाधारण में इनका नाम कम प्रचलित है। वह इसी से इनके काव्य में रस बहुत कम है।

मध्वाचार्य

वैष्णवों के सम्प्रदाय प्रवर्त्तक परम विद्वान् स्वामी मध्वाचार्य अपने को वायु का अवतार बतलाते हैं। इनका नामान्तर आनन्द तीर्थ पूर्ण प्रज्ञ मध्व मन्दार भी सुनने में आता है। इन महाशय ने भगवान् व्यास कृत सूत्र पर जो भाष्य रचा है उसे लोग पूर्ण प्रज्ञ दर्शन कहते हैं। इनका जन्म शाके १०४० वा सन १११८ ई० में हुआ था। इनका निवासस्थान दक्षिण में तुलवदेश है। इनके पिता का नाम मधुजी भट्ट था। सर्व दर्शन संग्रह में माधवाचार्य ने भी इनको वायु का अवतार बतलाया है ब्रह्म सूत्र की टीका गीता भाष्य विष्णुतत्व निर्णय आदि कई एक ग्रन्थ इन महाशय ने बनाये। इनकी मृत्यु सन ११९९ ई० में हुई। ये यद्यपि वेदान्ती कहे जाते हैं तथापि इनका मत भगवान् शङ्कराचार्य के अद्वैत बाद के अनुकूल नहीं पड़ता प्रत्युत ये द्वैत बाद के पक्ष पाती हैं। इनके शिष्यों के नाम विजय ध्वज ब्रह्मतीर्त और व्यासतीर्थ हैं।

विलसन महाशय के मत से यह सन १३१० ई० में वर्त्तमान थे। पर जो समय ऊपर बतलाया गया वही ठीक जान पड़ता है।

मनोरथ

ये महाशय कश्मीर के महाराज जयापीड़ के सभासद हैं। राज तरङ्गिणी में कल्हण ने इनका नाम और २ प्रसिद्ध पण्डितों के साथ लिखा है। महाराज जयापीड़ का समय सन ८१३६ के पूर्व का है ऐसा निर्णय होचुका है निदान जो समय चटक सन्धिमान और दामोदर गुप्त आदि का है वही

मनोरथ का समझना चाहिये। अभिनव गुप्त ने ध्वन्यालोक लोचन में मनोरथ को आनन्दवर्द्धन का सम सामयिक भी बतलाया गया है। श्रीधर दास ने षडूक्तिकर्णामृत में भी इनका नाम लिखा है इनके रचित किसी ग्रन्थ का पता नहीं है। जयापीड़ के समकालीन होने के कारण इनका समय ख्रीष्टीय आठवी सदी का पिछला और नवीं सदी का आरम्भ भाग मान लिया जासकता है।

मम्मट

काश्मीर में संस्कृत के अनुपम विद्वान् पण्डित हो चुके हैं। श्री मम्मट जी भट्ट भी उनमें से एक हैं। इनके बनाये काव्य प्रकाश नाम ग्रंथ को संस्कृत साहित्य का रसिक कौन न जानता होगा। लोग कहते हैं नैषध काव्य के रचयिता श्री हर्ष मम्मट के भाञ्जे थे और जब श्री हर्ष ने नैषध काव्य बना अपने मातुल को दिखलाया तो उनने इस बात पर खेद प्रकट किया कि यह मुझे पहिले ही क्यों न मिला। यदि मिला होता तो उदाहरणादि के लिये यह एक ही ग्रंथ पर्याप्त था कई एक ग्रंथों के देखने तथा उदाहरण चुनने का प्रयोजन न पड़ता। नैषध के 'तव वर्त्मनि वर्त्ततां शिवं' इस भाग को 'तववर्त्म निवर्त्ततां शिवं' इस रीति से पढ़ मम्मट ने उसे अशुभ सूचक भी बता के दोष दिया था।

वास्तव में मम्मट ने काव्य प्रकाश के प्रत्येक विषय के लिये उदाहरण चुनने में बड़ा श्रम किया होगा काव्य प्रकाश में भट्ट लोल्लट श्री शङ्कुक भट्ट नायक अभिनव गुप्त आनन्द बर्द्धन (ध्वनिकार) वामन रुद्रट और भट्टोद्भट का नाम आया हैं। ग्रन्थ में जहां तहां पतञ्जलि कात्यापन भरत आदि मुनियों के वाक्य उठाये गये हैं और गाथा सप्तशती महावीर चरित, मालती माधव, रघुवंश, कुमार सम्भव, मेघदूत, शकुन्तला,, विक्रमोर्वशी, बाल रामायण, विद्धशालभञ्जिका, हनुमन्नाटक, ध्वन्यालोक कुट्टनी मतम्, महाभारत, विष्णु पुराण, किरातार्जुनीय, वेणीसंहार, काव्यादर्श, भर्तृहरि शतक, हयग्रीववध, रत्नावली; नागानन्द, अमरुशतक, माघ, पञ्चतन्त्र, सूर्यशतक, हर्षचरित, भट्टिकाव्य इत्यादि अनेक प्राचीन ग्रन्थों

के पद्य उदाहृत हैं। पर भवभूति कृत उत्तर चरित से कोई भाग उदाहृत नहीं देख पड़ता। क्या इसका यही कारण होगा कि उत्तर चरित सर्वथा निर्दोष ग्रन्थ है अथवा मम्मट के समय में कश्मीर में इस ग्रंथ की प्रसिद्धि नहीं हुई थी। जो हो वीर चरित और मालती माधव से मम्मट ने बहुत से श्लोक उठाये हैं जिस से स्पष्ट है कि भवभूति की प्रसिद्धि मम्मट के समय में कश्मीर में भलीभांति थी। शीला भट्टारिका विज्जिका आदि स्त्री कवियों के तथा भासके स्फुट पद भी काव्यप्रकाश में मिलते हैं मम्मट काव्य प्रकाश को समाप्त नहीं कर पाये थे। दशम उल्लास के परिकरालङ्कार तक रचने पाये थे शेष भाग को अल्लट सूरि ने रचके काव्य प्रकाश को पूरा किया। क्योंकि आनन्द कवि ने काव्य प्रकाश पर जो निदर्शन नाम की टीका रची है उसमें लिखा है।

कृतः श्री मम्मटाचार्य वर्यैः परिकरावधिः।
प्रबन्धः पूरितः शेषो विधायाल्लटसूरिणा॥

मम्मट के पिता का नाम जैयट और छोटे भाइयों के नाम कैयट और उव्वट वा औवट है। ये कैयट वही हैं जिन ने पतञ्जलि रचित महा भाष्य की टीका की है। मम्मट कश्मीर के निवासी हैं और काशी में जाके इनने विद्याभ्यास किया था। इनका मत शैव था। इनके पाण्डित्य की जो कुछ बड़ाई की जावे सब थोड़ी है। वैयाकरण और दार्शनिक तो ये हई हैं पर साहित्य में इनके विशेष ज्ञान का साक्षी काव्य प्रकाश ही है। काव्य प्रकाश की कारिका और वृत्ति मम्मट ही की रचित है पर उदाहरण प्रायः अन्य कवि बिरचित ग्रंथों से उठाये गये हैं। इस गून्थ पर कई एक टीकाएं हैं।

काव्य प्रकाश का अंगरेज़ी भाषा में भी अनुवाद महानुभाव पण्डित वर गङ्गा नाथ जी झा एम. ए. संस्कृत प्रोफेसर म्योर सेन्ट्रल कालिज प्रयाग ने कर दिया है और काशी के पण्डित नामक पत्र में यह गून्थ छप चुका है। उसकी भूमिका देखने तथा मूल काव्य प्रकाश पढ़ने से स्पष्ट होता है कि यह गून्थ कितना क्लिष्ट है। अनेकानेक टीकाओं के रहते भी

यह ग्रन्थ बिना दारुण परिश्रम के नहीं पढ़ा वा समझा जा सकता । कहा भी हैं । "काव्यप्रकाशस्य कृता गृहे गृहे टीका तथाप्येष तथैव दुर्गमः ।

काव्य प्रकाश की जितनी टीकाएं आज कल पाई जाती हैं उनमें सब से अधिक प्राचीन माणिक्य चन्द्र विरचित सङ्केत नाम की टीका है । यह माणिक्यचन्द्र जैन गुजरात का निवासी है और इसने सन ११६० ई० में काव्य प्रकाश की टीका रची । अतएव काव्य प्रकाश के रचे जाने का समय सन ११६० ई० से पूर्व में निर्णीत होता है ।

मम्मट प्रायः मालवाधीश भोजराज के समकालीन हैं । काव्य प्रकाश में भोज राज के दान की प्रशंसा में जो श्लोक हैं उस से स्पष्ट है कि मम्मट भोज से पूर्व के व्यक्ति नहीं हो सकते निदान जब भोज राज का समय सन ९९६ ई० से सन १०५१ ई० तक माना जाता है तो मम्मट का समय उसी का पिछला भाग वा उसके तनिक पीछे मान लिया जावे । यों ख्रीष्टीय ११ वीं शताब्दी के पिछले भाग में मम्मट जी का विद्यमान रहना और काव्य प्रकाश की रचना करना सर्व वादि सम्म प्रतीत होता है ।

भक्त माला नाम ग्रन्थ के १४६ अध्याय में मम्मट और गोविन्द ठक्कुर के परस्पर साक्षात्कार होने की कथा है । गोविन्द ठक्कुर मम्मट के बहुत पीछे हुए हैं ऐसा पूर्व में निरूपित किया जा चुका है इससे इन दोनों महाशयों की भेंट सम्भव नहीं जान पड़ती । काव्य प्रदीप काव्यप्रकाशही की टीका है कोई भिन्न ग्रन्थ नहीं है इस बात से भी भक्त माला के कथानक की सत्यता में सन्देह ही उपस्थित होता है । जो हो पाठकों के विनोदार्थ वह कथानक यहां पर लिख दिया जाता है ।

एक बार श्रीगोबिन्द ठक्कुर यात्रा करने हुए कश्मीर में काव्य प्रकाश के रचयिता मम्मट पण्डित से भेंट करने के लिये पहुंचे । अम्मट मम्मट और कैयट ये तीनों भाई थे कैयट ने पतञ्जलि के महा भाष्य पर टीका रची और अम्मट ने वेद का भाष्य लिखा है । गोबिन्द ठक्कुर उनके द्वार पर जा खड़े हुए और मम्मट की स्त्री से पूछा मम्मट कहां हैं । उनका दर्शन किया चाहते हैं । स्त्री ने उत्तर दिया कि तुम यहीं बैठो

वे आते होंगे। यह देखो सामने एक कुआं है तब तक तुम वहां जाकर स्नान कर लो। ऐसा कह कर स्त्री चली गई। गोबिन्द ठक्कुर कुएं पर गये पर इसका पानी इतने नीचे था कि गोबिन्द ठक्कुर जल भर कर स्नान न कर सके। क्षण भर पीछे मूछ डाढ़ी जटा बढ़ाए पांव में चमड़े का जूता पहने मम्मट भी वहां आ पहुंचे। उन्हें देख गोविन्द को सन्देह हुआ कि यह कोई मुसलमान तो नहीं है। इतने में मम्मट ने भक्ति पूर्वक उन्हे नमस्कार किया और कहा हे ब्रह्मन् मैं मम्मट हूं आप ने मुझपर कैसे कृपा की? गोबिन्द ने कहा कि यहां कुएं में पानी बहुत नीचे पर है उचित गुण (रस्सी) न होने के कारण मैं स्नान नहीं कर पाता हूं। यह सुन मम्मट तुरन्त घर के भीतर गये और डोल लेकर बाहर निकले। उनने हाथ में कुछ जल ले मन्त्र पढ़ा और कुएं में अभिमन्त्रित जल छोड़ा। उसके प्रभाव से कुएं के मुख तक पानी चढ़ आया मम्मट ने गोबिन्द से कहा आइये और स्नान कीजिये। ऐसा कह मम्मट डोल में पानी भर के स्वयं नहाये और गोबिन्द देखते रह गये। निदान प्रसन्नता पूर्वक गोविन्द ने स्नान किया भगवान् की पूजा की भोजन प्रस्तुत किया और प्रसाद पाया। पीछे से फिर भाइयों सहित मम्मट गोबिन्द के पास आये और उन्हें काव्य प्रकाश नाम निज रचितग्रन्थ दिखाया गोबिन्द ने भी निज रचित काव्य प्रदीप उन्हें दिखाया और परस्पर उन दोनों ने एक दूसरे के ग्रन्थ लिख अपने पास एक२ प्रतियां रखली। इस प्रकार उन दोनों में बड़ा प्रेम बढ़ गया कुछ दिन पीछे गोबिन्द मम्मट से बिदा मांग मिथिला पुरी की ओर चल दिये।

REGISTERED No. A—308.

हिन्दी प्रदीप

मासिक पत्र

विद्या, नाटक, इतिहास, साहित्य, दर्शन, राजसम्बन्धी इत्यादि
के विषय में हर महीने की पहिली को छपता है ॥

शुभ सरस देश सनेह पूरित प्रगट ह्वै आनन्द भरै ।
बचि दुसह दुरजन वायुसों मणिदीप सम थिर नहिं टरै ॥
सूझै विवेक बिचार उन्नति कुमति सब यामें जरै ।
हिन्दी प्रदीप प्रकाशि मूरखतादि भारत तम हरै ॥

जि० २८ } प्रयाग { दिसम्बर
सं० १२ } { सन् १९०६ ई०

पं० बालकृष्ण भट्ट सम्पादक और प्रकाशक की आज्ञानुसार

पं० रघुनाथ सहांय पाठक के प्रबन्ध से

यूनियन प्रेस इलाहाबाद में मुद्रित हुआ

सभायें पुस्तकालय और विद्यार्थियों तथा असमर्थों से अग्रिम १॥=)
समर्थों से मूल्य अग्रिम ३।=) —०*०— पीछे देने से ४।=)

पिछले अङ्कों की पूरी जिल्द फी जिल्द मै पोस्टेज ३)

—:००:—

हिन्दीप्रदीप

जि० २८ } प्रयाग { दिसम्बर
सं० १२ } { सन् १९०६ ई०

संपादक की इति कर्तव्यता ।

यूरोप और अमरिका के स्वतंत्र देशों में पत्रसंपादकता राज्य का एक प्रधान तन्त्र या सलतनत का एक पांव समझा जाता है। राजा, तब मंत्रि समूह, उपरान्त संपादक का मन्तव्य, इस तरह शासन की समस्त प्रभु शक्ति मे संपादकों की तृतीय श्रेणी Third power है। जो योग्यता पूर्वक संपादक का काम निबाहा जाय ते संपादक का बहुत बड़ा दरजा माना जासक्ता है। साथही संपादकता का वड़ा नाज़ुक काम भी है, इसमें बड़ी गम्भीरता, पल्ले सिरे की योग्यता, सहिष्णुता और युक्त अयुक्त के बिचार का

होना बहुत आवश्यक है, स्वार्थ त्याग और सभभाव की भी ज़रूरत है। मानो ये दो खंभे हैं जिसके सहारे संपादक अपने विचार, तर्क वितर्क और ऊहा पोह की बड़ी से बड़ी इमारत खड़ी कर सक्ता है, या ये दो बड़े मैदान हैं जिसमें वह कलम के घोड़े दौड़ा सक्ता है "न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः" ॥ इसका पूरा उपयोग संपादक ही के काम में देखा जाता है। पक्षपात One sided view या एकाङ्गी होना संपादक के सुयश प्ररोह के नाश करने को मानो हिमपात है। सिविलियनों का एक मात्र औज़ार पायोनियर जब तब हम लोगों को जट्ट बट्ट सुनाया करता है और यही चाहता है कि हिन्दुस्तानी किसी तरह न उभड़ने पावें। हम जेताओं की जाति के हैं अपने इस जेतृत्वाभिमान को कैसी भद्दी तरह पर प्रगट कर रहा है। अभी हम लोग ऐसा किये होते तो पायोनियर हमें मूर्ख असभ्य और जंगली कह हमारा उच्छेद कर डालने में कसर न रखता।

संपादक को धुंधला तथा उजाला दोनों भाग दिव्य दृष्टि से देखना चाहिये कलकत्ते की पत्रिका सदृश न हो कि गवर्नमेंट के हर एक काम में दोष ही निकाला करे, अंगरेज़ी शासन में कुछ भलाई भी है कभी एक बार संपादक महाशय अपनी फुटही ज़बान से नहीं कहते। सुयोग्य संपादक के लिखने का असर राजा प्रजा दोनों पर भरपूर पड़ता है, सर्व साधारण के दुःख को राजा तथा राज कर्मचारियों तक पहुंचाने को संपादक का लेख अद्भुत द्वार है। जिसके निः स्वार्थ और पक्षपात रहित लेख का यातबार सब को रहता है। देश का सच्चा बन्धु जैसा सम्पादक है वैसा दूसरा नहीं है तब सम्पादक का जितना मान और प्रतिष्ठा की जाय सब कम है। केशरी के सम्पादक बाल गंगाधर तिलक जो इस समय पूना प्रान्त में देव तुल्य माने जाते हैं सो इसी से कि उन्हों ने कई बार कई तरह पर देश के साथ सच्ची सहानुभूति अपने लेखों में दिखलाया है। लोगों ने जब उन का आत्मत्याग देशानुराग की कसौटी में अच्छी तरह कस लिया तब उनमें ऐसा भक्ति का भाव दरसा रहे हैं। शासन के काम में सम्पादक

प्रजामात्र का राजा की ओर से प्रतिनिधि होकर प्रजा का उपदेशक और शिक्षक बन सक्ता है। इस लिये कि प्रजा की भलाई के लिये राजा ने जो कानून बनाये हैं या कोई नया कानून बनावे उसके मर्म को जैसा संपादक समझता है और तर्क वितर्क द्वारा उसका खण्डन मण्डन कर सक्ता है वैसा दूसरा नहीं। अपने लेख द्वारा सर्व साधारण को Law abiding कानून के अनुसार चलने वाला यही बना सक्ता है। इसी से वह राजा का प्रतिनिधि कहलाने योग्य है संपादकों के ज़ीट उड़ानेका डर न रहता तो ये राज कर्मचारी न जानिये क्या अपने मन की कर गुज़रते। सिविलियन तथा ऐंगलो इण्डियनो ने पायोनियर को अपना औज़ार इस लिये बना रक्खा है कि यह उनकी मन मानी कर गुजरने का भर पूर पोषण करता है। पत्रिका आदि पत्र इसका प्रतिवाद करते हैं इसी से पत्रिका आदि पत्र के हिन्दुस्तानी संपादक कर्मचारियों के आंख का काटा हो रहे हैं। नेपालियन का कथन है कि सम्पादक का प्रतिवाद हज़ार सिपाहियों की एक पलटन के बराबर है। जहां Public opinion सर्व साधारण के एक मत्य का अभाव है वहां पत्र सम्पादकों की राय सर्व संमत मानी जाती है। इस अंगरेज़ी शासन में समाचार पत्रों से जो कुछ लाभ होरहा है किसी से छिपा नहीं है जन समाज में सभ्यता तथा अंगरेज़ी राज की गूढ़ से गूढ़ पालिसी के प्रकाश का यह एक मात्र द्वार है किमधिकम्।

--:o:--

समालोचक और निन्दक॥

आज कल दैव के सुयोग से हिन्दी साहित्य देश में समालोचकों का जिधर देखो उधर दर्शन हो रहा है। यह सुयोग हिन्दी साहित्य में भविष्यत् की भलाई का सूचक है। यह देख और सुन मातृ भाषा के प्रेमियों में कौन ऐसा होगा जो हर्षोन्मत्त न बन जाता हो। पर खेद है कि विज्ञ समाज

में समालोचक का नाम जितना आदरणीय है उतना उसके कार्यों से सिद्ध होता नहीं दिखाई देता। लोक में प्रसिद्ध है कि जब कोई किसी वस्तु का मान करने बैठता है तब वह उस साधन वा करण पदार्थ का ज्ञान पहिले कर लेता है जिस से वह मान सिद्ध होने वाला होता है। इसी "मानाधीना मेय सिद्धिः" न्याय के अनुसार जब २ हम समालोचक के परम गौरवान्वित नाम को प्रमाणित किया चाहते हैं तभी तब मन खिन्न हो मुरझा जाता है। हमारे इस कथन का सत्यासत्य जानने के लिये दूर न चल कर "अनस्थिरता" विषयक लेख जनित समालोचकत्व का झंडा थांभने वालों की लेखमालिका पक्षपात का पक्ष तोड़कर पढ़नी चाहिये। मतलब यह है कि जिन प्रशंसनीय गुणों से समालोचक को अलंकृत रहना चाहिये वैसा हम उन्हें नहीं पाते हैं बरन एक प्रकार के निन्दक के रूप में पाते हैं। अतएव इस लेख के द्वारा पाठकों को यह दिखा देना चाहते हैं कि समालोचक और निन्दक एक नहीं है, वरन भिन्न २ हैं, और उन दोनों के गुण कर्म स्वभाव भी भिन्न २ हैं। आशा है, कोई पाठक इसे किसी व्यक्ति विशेष पर आक्षेप न समझेंगे॥

पदार्थ वादियों ने पदार्थ के दो भेद माने हैं: एक सूक्ष्म और दूसरा स्थूल। इन द्विविध पदार्थों में जन्य जनक का ऐसा भारी सम्बन्ध है कि एक के बिना दूसरे का अभाव होजाता है। अर्थात् स्थूल से सूक्ष्म की उत्पत्ति होती है और सुक्ष्म से स्थूल की। सूक्ष्म पदार्थ-समूह को हम यहां परमाणु जगत् कहें तो कोई कठिनता न होगी। इस बात को और भी स्पष्ट कर दिखाया चाहें तो कहना पड़ेगा कि स्थूल पदार्थ वह है जिस को हम रंग रूप आकारादि से अवच्छिन्न होने पर भी अनायास देख सक्ते हैं। दूसरा जो सूक्ष्म पदार्थ है उसके अवयव, जो परमाणु रूप से हैं, हवा में सतत उड़ते रहते हैं। इस लिये इसका ज्ञान प्राप्त करने को हमें स्थान और चेष्टा विशेष की आवश्यकता होती है। इन दोनों पदार्थों के सृष्टि तत्व पर विचार करने से स्पष्ट प्रगट होगा कि स्थूल

पदार्थ में संयोगी पदार्थों के परमाणु एक दूसरे से सट कर ऐसे मिले रहते हैं कि उनका सहसा अलग करना मानवी श्रम से परे नहीं तो बहुत ही कठिन है। इसका कारण पदार्थ विद्या में स्नेहाकर्षण कहा गया है। स्नेह वा प्रेम का आकर्षण उन्हीं पदार्थों में होता है जिन में गुणों की कई अंशों में समानता हो। परमात्मा के इस व्यापक नियम का प्रभाव मानव समाज में भी तादृश ही पाया जाता है। जैसे सूक्ष्म से स्थूल पदार्थ की उत्पत्ति होती है वैसेही व्यक्तियों से समाज का जन्म होता है और जैसे स्थूल पदार्थ का रूपान्तर सूक्ष्म परमाणु निचय हैं उसी प्रकार समाज गत व्यक्ति सकल भिन्न २ हैं इस समाज के लिये भी जड़ पदार्थ की तरह प्रेम वा स्नेह की आवश्यकता है। यदि प्रेम न हो तो समाज के छिन्न भिन्न होजाने में ज़रा भी सन्देह नहीं। आशय यह है कि यह प्रेम ऐसी शक्ति है जिस से संसार स्वभावतः दृश्यमान् होरहा है। पुनः, इस प्रेम को गुण की सादृश्यता भी अवश्य मिलनी चाहिये। जिन मनुष्यों के गुण स्वभाव एक दूसरे से भिन्न होते हैं उनका वा उनसे समाज सङ्गठन करना असम्भव है। गुण की समानता में एक ऐसी शक्ति निहित रहती है जो चुंबक की तरह गुणी को अपनी ओर स्वतः आकर्षित करती है। इस से जाति में ऐक्य भाव का उदय होता है। जिस समाज में या जाति में अनेकता होती है वहां प्रेमी मनुष्य का एक दम अभाव दिखाई देता है कारण यह कि प्रेम का गुण है बहुत को एक करना और अप्रेम का गुण है एक को बहुत बनाना। इन्हीं दोनों, प्रेम और अप्रेम, के प्रवर्तक देवताओं को हम समालोचक और निन्दक की अभिधा देते हैं। यह तो हुई परिभाषा अब आगे चलिये।

सच कहा जावे तो समालोचक और निन्दक, दोनों अनन्त गुणवाले हैं। इनके गुणकीर्तन में कई ग्रंथ कई लेख बन चुके और अब तक बनते जाते हैं। ऐसे गुणी जीवों का मुझ सा क्षुद्र के द्वारा स्वभाव वा लक्षण वर्णित होना लेखक का साहस कहा जायगा। तौभी "करन पवित्र हेतु

निज बानी" इनके गुणों का थोड़े में यहां दिग्दर्शन किया जाता है ।

समालोचक और निन्दक ये दोनों मानव समाज के मुकुट और कंटक के समान हैं। एक का स्थान ऊंचा और दूसरे का सब से नीचा है । समालोचक सब का हितैषी है निन्दक द्रोही और विश्व विद्वेषी है। समालोचक प्रेम और दया भरी चितवन से संसार को देखता है और निन्दक कुटिल दृष्टि से सर्प की तरह । समालोचक व्यक्तिगत दोष देख सशोक प्रियवाक्य का उपहार करता है । और निन्दक विषैली उक्तियों की बौछार भुजा ठोंक और मूछ मरोड़ करता रहता है । समालोचक गुण दोष दोनों को देखता है निन्दक केवल दोषमात्र । समालोचक गुण की प्रशंसा करता है निन्दक आह की दीर्घ श्वास छोड़ता है । समालोचक की आलोचना से प्रेम के परमाणु एक दूसरे से मिलते जाते और गुण समानता बढ़ती जाती है पर निन्दक की आलोचना से वेही परमाणु पृथक् २ और हलके होकर हवा में उड़ जाते हैं । समालोचक का वचन असहय और उत्साह का बढ़ानेवाला होता है और निन्दक का असहय और उत्साह को हर लेता है । समालोचक का उद्देश्य सर्वतोभाव से श्रेष्ट और सर्वमान्य है और निन्दक के घर में उद्देश्य का कोई रूप नहीं दिखाई देता । वे सर्वथा नीच बुद्धि और स्वार्थ पर होते हैं । समालोचक के दो ज्योति पूर्ण नेत्र होते हैं और निन्दक के नेत्रों में ईर्षामर्ष का जाला छाया रहता है । समालोचक देश काल और पात्र का विचार कर आगे पांव धरते हैं और निन्दक के पांवही नहीं होते । वह गोल गेंद सा लुढ़कता रहता और डंडे के सहारे चलता है और जब चलता है तब तीव्र गति से चलता है । समालोचक दिवालोक में स्वच्छन्द और सानन्द विचरण करता है और निन्दक उसी प्रकार तमसाच्छन्न गाढ़ निशा में उलूक की तरह । समालोचक पुष्प सौरभ का विशेष आमोदी है और निन्दक है दुर्गन्धि पूरित नरक कुण्ड का कीटराज । समालोचक समाज के ऊपर रहता है और निन्दक समाज से अलग पिशाच रूप में । समा-

लोचक दूसरों की सम्मति पर आनन्दित होता है निन्दक उससे जल उठता है। इस संसार में प्रत्येक सत्पुरुष की आकांक्षाओं की एक २ सीमा निर्दिष्ट रहती है किन्तु देखते हैं निन्दक में यह बात नहीं पाई जाती है। उसके कार्यों का उपक्रम तो होता है पर उपसंहार नहीं होता। समालोचक को सत्कार्य तथा साधुवाद से सन्तोष नहीं होता और निन्दक को निन्दित कार्य और कुत्साबाद से सन्तोष नहीं होता। दूसरों की बातों का सत्यासत्य जानने के लिये समालोचक के पास एक तराजू और एक कसौटी होती हैं पर निन्दक के पास सिर्फ एक सड़क का साधारण कंकड़, सो भी उसके पास सदा बना नहीं रहता प्रत्युत काम हो चुकने पर फेंक दिया जाता है इत्यादि कहां तक कहें इनके अनेक गुण हैं। यदि एक को सुगुणों का प्रकाशक मणि कहें तो दूसरे को अवगुणों का जन्मदाता विरञ्चि ब्रह्मा। इत्यादि इत्यादि।

जो कुछ दोनों का ऊपर गुण कीर्तन किया गया उस से प्रगट है कि समालोचक निन्दक से भिन्न है। दोनों की गति एकही ओर होने से और लोगों में पक्षपातिता आत्म श्लाघा आदि कुपथ्य का सेवन अधिक होने से कोई यह नहीं कह सक्ता कि कौन समालोचक है और कौन निन्दक है। लोग मन में तो जान लेते हैं कि अमुक समालोचक है और अमुक निन्दक, पर मुंह खोल नहीं कह सक्ते जो विज्ञ और परिणाम दर्शी समाज में एक बड़ा भारी दूषण है। आशा है साहित्य देश के राजा और समाज के नेता इस पर बिचार करेंगे।

अनन्त राम पांडे-रायगढ़

प्रारब्ध और उद्योग।

उद्योग बादियों की आज कल धूम है बिना उद्योग के फल मिलना असंभव है। सच है उद्योग कारण है और फल परिणाम परन्तु बहुतेरे

उद्योग करके भी फल को प्राप्त नहीं होते ऐसे समय पर प्रश्न होता है कि उद्योग सफल क्यों नहीं हुआ ? तब उसका उत्तर यह दिया जाता है कि "यत्ने कृते यदि न सिध्यति को ऽत्रदोषः" इसका अर्थ दो प्रकार का है एक प्रारब्ध बादी की दृष्टि से दूसरा उद्योग बादी की दृष्टि से। प्रारब्ध बादी कहता है यत्न किया तिसपर भी फल न हुआ तो इस में हमारा क्या दोष है हमने अपना काम किया यत्न करनाही हमारे अधिकार का है फल हमारे हाथ का नही । भगवान् श्री कृष्ण ने कहा ही है कि "कर्मरायेवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन" यत्न बादी कहता है यत्न करके भी यदि सिद्धि न हुई तो देखो कि अब इस यत्न में कः दोषः क्या कसर रह गई उस त्रुटि को दूर करो और फिर यत्न करो तो सिद्धि अवश्य होगी । यत्न करने पर फल का मिलना कार्य कारण भाव के सिद्धान्त का उदाहरण है । अब प्रारब्ध बादी यदि यत्न कर के एक ही बार के प्रयत्न के पश्चात् बिरत होजाय तो समझना चाहिये कि वह गलती है पर है उसको चाहिये कि वह यत्न करता ही चला जाय। यत्न योग्य रीति से हो तो फल का मिलना अवश्य है । उस के लिए फल अदृष्ट है परन्तु यत्न के बिकल होने पर वह दुःखित नहीं होता, वह इस तत्व पर समाधान मानता है कि यत्न ही करना मेरे बस का है फल का देना तो ईश्वराधीन है यह प्रारब्ध बाद है परन्तु प्रारब्ध क्या है ? यह प्रश्न रहाही । प्रारब्ध वह है जो आरंभ होचुका है। मनुष्य क्या जीव मात्र पुनर्जन्म के चक्र पर सवार है । पूर्व जन्मों में आरंभ किए हुए काम उनके इस जन्म के कार्यों के कारण हैं । वे उन कार्यों को बलात् करते ही चले जायंगे । परन्तु इस में भी बाधाएं आती हैं विद्वानों के पुत्र सौ सौ यत्न करनेपर भी क्यों मूर्ख निकलते हैं ? सच है यदि उन्हें पूर्व जन्मों में विद्या का संस्कार ही न हुआ हो तो इस जन्म में विद्या में रुचि क्यों कर हो सकती है यहां

प्रारब्ध प्रबल है एक राजा मर गया कोई गरीब लड़का जो उसकी वंश प्रणाली में जन्मा है राजा बना दिया गया वह राजा होगया क्यों? पूर्व संचित के कारण। एक माता पिता के दो पुत्र एक से नहीं होते बुद्धि में, गुणों में शील में क्यों? उनके पूर्व संस्कार भिन्न रहे होंगे। यह पूर्व संस्कार फल अदृष्ट है और यही प्रारब्ध वादियों का सहारा है परंतु इतना सब मान कर हम उद्योग वादियों की परिपुष्टि करेंगे सो कैसे? प्रारब्ध वादियों का सिद्धांत कायम रख कर यदि पूर्व संचित और संस्कारों के अनुसार हमारी इस जन्म की परिस्थिति बनी है तो उस से यह सिद्ध है कि इस जन्म में हम जिस प्रकार बर्तेंगे कर्म करेंगे उसी के अनुसार अगामी जन्म में हमारा अदृष्ट होगा। इस से हमारे प्रारब्ध के हम मालिक हैं चाहे उसे बनावें या बिगाड़ें अगर आगे हमारा प्रारब्ध खोटा निकला तो उसके दोषी हमही होंगे न कि ईश्वर या और कोई। अर्थात् हम अपने प्रारब्ध के विश्वकर्मा हैं अगर चाहें तो उसे उत्तम से उत्तम बना सकते हैं हमारे यत्नों के परिणाम मिलेंगे ही वही प्रारब्ध है। इससे अपने भावी प्रारब्धों को यदि सुपरिणामी सुन्दर और सुखदाई बनाने की आप की इच्छा है तो सन्मार्ग में यत्न कीजिये ईश्वरत्व को देखिए उसकी इच्छा और उद्देश्य का अभ्यास कीजिये और उन्ही के अनुसार अपने जीवित कर्तव्य को स्थिर कीजिये फिर मृत होने पर भी आप अमर हैं Even in our ashes live our wonted fires

गणपति जानकी राम दुबे

Honesty ईमानदारी ॥

इस गिरी हुई दशा पर भी देश में धन की कमी नहीं है किन्तु नीयत का सच्चा ऐसे ईमानदार खरे आदमी की कमी अलबत्ता है जिस्के विश्वास पर लाखों और करोड़ों का काम शुरू किया जाय और वह उस कारखाने का मेनेजर प्रबन्धकर्ता नियत किया जाय। इससे उचित जान

पड़ा कि आज इसी का कुछ बिचार करैं और अनेक ऊहा पोह के द्वारा सिद्ध कर दिखावें कि Honesty आर्जव या ईमानदारी आदमी के लिये बहुमूल्य धन है, पर उसी को जो सौंत के इस धन को रखना जानता हो या सीखे हो।

जो जितना चित्त का सरल और निष्कपट है उस मे उतनीही ईमानदारी होगी। जो जितनाही छल कपट और कुटिलाई जानता होगा वह उतनाहो बदनीयत होगा। केवल रुपये पैसे के लेन देन मात्र से इसका सरोकार हो सो नहीं वरन हमारे हर एक काम प्रत्येक शब्द जो हमारे मुख से निकलते हैं सबों में इसकी परख होती है। पक्का ईमानदार उनसे बहुत घिनाता है जो डींग मारने वाले बात के धनी नहीं हैं। ऐसा मनुष्य जो कहता कुछ और करता कुछ और है सभ्य समाज में तो वह आदर के योग्य कभी होही गा नहीं सर्वसाधारण में भी उसका कोई विश्वास नहीं करता। मान लो कि कुटिल दुनियादार एकबार दोबार अपनी चालाकी में कामयाब होगया तो बस उसी एक बार दो बार के लिये काठ की हांडो क्या बार २ आग पर चढ़ाई जा सक्ती है? आगे को सदा के लिये उसका विश्वास जाता रहता है। आदमी का इरादा या नीयत Intention हर एक काम में देखा जाता है। नीयत ईमानदार के मन रूप तख्त ताऊस पर राजा के समान सुशोभित हो जितने बाहरी काम हैं सबों में उसकी जागती ज्योति जगमगाती रहती है। "नीयत की बरकत" यह प्रचलित कहावत बड़े अनुभवी पुरुषों का दिया हुआ सारटीफिकेट या प्रतिष्ठा पत्र के समान है। हम ऊपर कह आये हैं केवल रुपये के लेन देन में नीयत की परख नहीं है निदान हर एक बात में जो मुख से निकलती है इसकी परख होती है। दियानतदार जो अपनी बात का दृढ़ और कौल का सच्चा है बिना सोचे समझे कोई बात अपने मुख से नहीं निकालता जो कहता है उसे चाहे जो हो निभाता है "प्राण जांय बरु बचन न जाहीं"।

विदुषां वदनाद्वाचः सहसा यान्ति नो वहिः।
याताश्चेन्नपराञ्चन्ति द्विरदानां रदा इव ॥

समझदार के मुख से सहसा कोई बात नहीं निकलती जो निकल गई तो फिर उसे वह लौटाता नहीं जैसा हाथी के दांत जो निकले सो निकले। चौहानों के सिर मौर हम्मीर मिट गये पर अपना हठ निबाहा अलाउद्दीन की इतात न कबूल किया। ऐसे का विश्वास करना जो अपने कौल का सच्चा नहीं है बड़ी भूल है किसी का कथन है "बिन दगा दुनिया का कार नहीं। दगा की ढाल रख तलवार नहीं" तात्पर्य यह है कि दगा या बेमानी किसी के साथ करै नहीं पर इस हुनर को जानै अवश्य। निश्चय यह दगा बाज़ों से अपने को बचाने का सहज लटका है। पर हम कहते हैं इतनी भी झुठाई की चालाकी अपने में क्यों आने दे। बात का धनी की बराबर कोई भी धनी संसार में नहीं है तब क्यों हम उस धन में बट्टा लगाने दें। हमें चाहिये हम इस खरापन और चुखाई को अपने हर एक काम में प्रगट करते रहैं-बहुत लोग अपने नित्य के वर्ताव की छोटी २ बातों में इस की उपेक्षा कर देते हैं। जब मामूली छोटी बातों में हम खरे और चोखे अपने को न दिखला सके तो कौन आशा है कि कोई बड़ा फर्म हमें सौंप दिया जाय और हम दियानतदार बने रहैं। अपनी गाढ़ी मेहनत की कमाई के सिवाय फर्म की उस बड़ी सम्पत्ति को मिट्टी का ढेला मानें और अपनी नीयत को डिगने न दें। ऐसे खरे सच्चे लोगों का हमारे यहां सर्वथा अभाव तो न कहैं गे पर ऐसों की कमी अलबत्ता है। हम इस स्वदेशी आन्दोलन में कृत कार्य तभी होसकेंगे जब ऐसे लोगों को अपने बीच पैदा करैं या बनावें। वाणिज्य या तिजारत की यह ईमानदारी मानो जान है जो देश तिजारत में चढ़ा वढ़ा है वहां ऐसों की अवश्यमेव अधिकाई होगी हमारे यहां का वाणिज्य अधिकतर माड़वारियों के हाथ में है इन्में कहा तक ईमानदारी है सो

इसी से साफ़ ज़ाहिर है कि कोई साल खाली नहीं जाता जिसमें दो एक दिवाले न पिटते हों। बंगाल में पढ़े लिखे स्वदेशी के पीछे छटपटा रह हैं पर जिनके हाथ में तिजारत की कुंजी है वे यही माड़वारी हैं जिनमें बिलकुल इसका असर नहीं पहुंचा न वे अपना स्वार्थ चावल भर कम कर सक्ते हैं तब कैसे कहैं कि बङ्गाल के लोग इसमें कामयाब होंगे। यही सब देख भाल बम्बई वाले रोज़गारी माड़वारियों को नहीं धसने देते और बराबर उन्नति करते जाते हैं। M. P.

वृत्तियां।

कापोती वृत्ति—है इत लाल कपोत व्रत कठिन नेह की चाल। मुख सों आह न भाखि हीं निज सुख करो हलाल।

वैतसीवृत्ति-अनमाणां समुद्धर्तुं स्तस्मात्सिन्धुरयादिव। आत्मासंरक्षितः सुह्मै र्वृत्तिमाश्रित्यबैतसीम्।

अजगरी वृति-दैव और प्रारब्ध पर विश्वास किये अजगर के समान पड़े रहना।

मधुकरीवृत्ति-सारग्राही जैसा शहद की मक्खी थोड़ा २ फूलों से रस खीच इकठ्ठा करती है

श्ववृत्ति–सेवावृत्ति–दास्य-सेवकाई-नीचसेवा-श्ववृत्तिर्नीच सेवनम् "ऋतामृताभ्यां जीवेत ऋतेन प्रमृतेनच-सत्यानृताभ्यांजीवेत नश्ववृत्याकथंचन" "ऋतमुञ्छशिलं प्रोक्तं अमृतं यत् अयाचितम्। सत्यानृतंतु वाणिज्यं श्ववृत्तिर्नीच सेवनम्।

बक वृत्ति–दंभ, दिखाने मात्र को साधु, बगुला की तरह।

वन्यवृत्ति–बन के फल फूल खाके रहना "वन्यवृतिरिमांशश्वदात्मानुगमनेनगाम् रघु।

आकाशी वृत्ति–कहीं से कुछ निश्चित आमदनी का न होना।

शिलोंछ वृत्ति-खेत या मण्डई में गिरे पड़े दानाओं को बिन उसी को खाकर रहना-पहले के ब्राह्मण ऐसाही करते थे।

उपयुक्त विशेषण।

चेष्टा-काकचेष्टा-ध्यान-बकध्यान-निद्रा-श्वाननिद्रा-सुख की नीद दीर्घ निद्रा-गाढी नींद-कुम्भकरण की नींद-कोकिलकण्ट-कलकण्ठ-नाद-अर्तनाद-स्वर-गम्भीरस्वर-ग्रीवा कम्बुग्रीवा-गरदन-शंख सी-सुराही सी नासिका-तिलपुष्प नासिका-सुग्गा की टोंट सी-कपोल-गोल कपोल Bosy cheeks अधर बिम्बाधर-विद्रुम सा-बन्धुजीवप्रभाहर-"अधरोऽमधीराल्या बन्धुजीवप्रभाहरः-अन्यजीवप्रभांहन्त हरतीति किमद्भुतम्"-वाहु-आजानुवाहु-भोगिभोग-हाथी की सूंड़ सी-छाती-किवाड़ सी "कपाट वक्षा परिणद्धकन्दरः" शिलोरस्क-पेट ताशा सा-ढोल सा-नगाड़ेसा-उदर दरी-इयमुदरदरी दुरन्त पूरा यदि न भवेदभिमान भंगभूमिः-हाथ मुक्तहस्त बद्धमुष्टि-रिक्तपाणि खालीहाथ-पाणिपल्लव-शोणपाणि-पंचशाख-मुख कुल्हिया सा-बन्दर सा-मुग्ध मुखच्छवि-वदनारविन्द-प्रसन्न बदन-चन्द्र बदन-इन्दु मुख-मनहूस-चेहरा-उदास-घोड़ासा-लुखरी सा-हास्य-ईषत्हास्य-दन्त कुदमल मोती-से-अनार के दाने से-केश रेशम के लच्छेसे-केशपास-केशकलाप कान सूप सा-कुंजर सा-माथा-चौड़ा-ललाटफलक-तख़्तासा-शेष फिर कभी। जि-१५ के जनुअरी फेव्रुअरी और मार्च के नम्बर में हम इसे सविस्तृत लिख चुके हैं।

—:०:—

होता आया है।

ब्याह शादियों में गाली क्यों गाई जाती है? होता आया है। दिवाली में जुआ सब लोग क्यों खेलते हैं? होता आया है। होली के दिन फोश बातें क्यों बकी जाती हैं? होता आया है। विवाह में कन्या से कुम्हार का चाक क्यों पुजवाया जाता है, धोबिन से सुहाग क्यों दिलाया जाता है? होता आया है। निरक्षर भट्टाचार्य सब भांत आवारा

कुलाचार्य पुरोहित क्यों किये जाते हैं ? होते आये हैं। छोटे २ दुध मुहे नासमझ बालक बालिकायें सात भांवर फिराय क्यों मिला दिये जाते हैं ? इस लिये कि ऐसा होता आया है इत्यादि। श्रुति स्मृति पुराण धर्मशास्त्र के सब ग्रंथों को उलट डाला। पुराने ऋषि और मुनियों के वाक्यों का मर्म छानडाला। इतिहास की पुस्तकों के एक २ पत्र पढ़ डाला पर इस होता आया का मूल कहीं न पाया। देश के किसी प्रमाणिक पुरुष ने इसे चलाया है सो भी नही, गतानुगतिक के क्रम पर ऐसा होता आया है तो कोई ज़रूरत नहीं कि तुम अपनी अकिल के घोड़े को भेड़िया धसान के मैदान में सरपट भगाओ। किन्तु अन्धी समाज को प्रसन्न रखना चाहते हो तो आंख मूंद अन्ध परंपरा पर बराबर चलते रहो।

फारसी और संस्कृत ॥

मारस्पर्श समं सरोजशयनं मारांगना शुद निशा
हेहरगिज़ हितकारिणि मम गले हारोपि नारोप्यताम् ।
दूरे रफ़त पतिर्मनोभवहमी वाणैर्मरा मेज़नद हाला मं
चिकुनं सुधापतिरसौ तापाय मे मेशवद् ।

--:०:--

उर्दू और संस्कृत ।

दृष्ट्वा तत्र विचित्रतां तरूलतां मै था गया बाग में
काचित्तत्र कुरंगशावनयना गुल तोरती थी खड़ी ।
उद्यद्भ्रू धनुषा कटाक्ष विशिखैर्घायल किया था मुझे
मज्जानी तव रूपमोहजलधौ हैदर गुज़ारे शुकुर ।

हा स्वामी रामतीर्थ।

विरक्त और त्यागियों में स्वामी दयानन्द के उपरान्त यही महानुभाभ सच्चा देश हित चाहने वाले हुये। इनमें तो बहुत से एसे गुण थे जो और ठौर कहीं नहीं पाये जाते। आत्मत्याग और दृढ़ संकल्पता की मूर्ति थे। पुराने क्रम की तपश्चर्या के नमूना थे। यों तो हिन्दू पन को लात मार कितने अंगाली बंगाली इङ्गलैण्ड और अमरिका होकर लौटे हैं, लेकचरों में बड़ी २ बातें फकोराकरते हैं पर कच्चा अन्न और फलखाकर इन्होंही ने अपनी हिन्दुआनी निबाहा। ऐसा दृढ़आचारवान् हम किसी को देखैं तो कभी समुद्र यात्रा का प्रतिवाद न करैं। हा कराल काल तू किसी को नहीं छोड़ता।

राजा सर तन्जोर माधव राव के. सी. एस. आई.

भारत वर्ष में ऐसा कैान मनुष्य होगा जिसने सर टी माधव राव का नाम नहीं सुना हो? भारत माता के ये वही सुसन्तान हैं जो अपने समय के सर्वोच्च नीतिवान्, विद्वान् और चरित्र वान् पुरुष थे। जिन्हें सरकार ने भारत का एक मात्र राजनीतिज्ञ और देश सेवी जानकर के. सी. एस. आई. की पदवी से सुशोभित किया था, जिन्हें समस्त भारतवासी अपना आदर्श गुरू और शिक्षक मानते हैं। देशी राजे जिन्हें अपना एक मात्र विज्ञ राज कार्य कुशल मन्त्री तथा प्रजा पालक जानते थे जिन्हें प्रजागण अपना अपूर्व सहायक और उपकारक समझते थे।

आज हम इन्हीं पुरुषरत्न का जीवन चरित पाठकों को भेंट करते हैं।

जिस समय मुसल्मान बादशाहों के अविवेक और अधर्मपूर्ण राजनीति से भारत थर्रा रहा था, जिस समय प्रान्त २ और ग्राम २ में राज द्रोह के चिन्ह दिखाई दे रहे थे, जिस समय अपने धर्म कर्म के नाश होने के

भय से धार्मिक हिन्दू नर्मदा, गोदावरी, यमुना और गंगा जी की गोद में शरण ले यवनों के हृदय विदारक पुराचार और पापों से मुक्ति पा रहे थे उसी समय कई एक उच्च कुल महाराष्ट्र-ब्राह्मण तन्जोर देश में आ बसे थे। कालान्तर में वे मद्रास प्रान्त के कई स्थानों में उपजीविका के हेतु बिखर गये थे। इन्ही कुलीनों के एक कुल दीपक अपने बाहु बल और दृढ़ अध्यवसाय से त्रावन्कोर के वेंकटराव राजा के इतने कृपा पात्र हुए कि राजा ने उन्हें दीवान की उच्च पदवी से सुशोभित कर इनपर अपने प्रेम का पूर्ण परिचय दिया। प्रायः ऐसा देखा जाता है कि बड़े आदमी के पुत्र पौत्रादि शुष्क अभिमान से ग्रस्त होकर विद्या तथा सत्संगति आदि की परवाह न कर स्वेच्छाचारी हो व्यभिचार इत्यादि दुराचार ही को अपने पूर्व पुरुषों की अर्जित कीर्ति की रक्षा का उपाय मान लेते हैं। और वे यही प्रगट करते रहते हैं कि एक दिन हम भी अपने पिता पितामह के उस उच्च पद पर आरूढ़ होंगे तब अपनेमन की कर गुज़रेंगे।

परन्तु इस स्थल में हमें यह बात आश्चर्य जनक मालूम होती है कि राजा वेङ्कट राव के पुत्र पौत्र भी उन्हीं के पद के अधिकारी होते हैं यहां आश्चर्य दूर करने के हेतु हमें यह कहना अप्रकृत नहीं होगा कि यह सुशिक्षा और सावधानी का ही फल है। अस्तु राजा वेङ्कट राव के पश्चात् उनके भतीजे राजा रङ्गराव त्रावनकोर के दीवान नियत किये गये। यही हमारे इस चरित्र नायक के पूज्य पिता हैं।

हमारे चरित्र नायक का जन्म सन् १८२८ ई० को कुम्भ कोणम ग्राम में हुआ था जो दक्षिण देश में संस्कृत विद्या का घर है और जहां बड़े २ संस्कृत विद्वानों का वास है।

१३ वर्ष की अवस्था में माधव राव प्रेसीडेन्सी हाई स्कूल में भरती हुए। ५ वर्ष के बाद फर्स्ट क्लास का डिप्लोमा प्राप्त कर लिया। उन की

बुद्धि और विद्या को देख कर मिस्टर ई. बी. पोवेल. सी. एस. आइ. ने उन्हें एक चतुर और बिचित्र विद्यार्थी कहा था। थोड़े ही दिनों के पश्चात् वे पोवेल साहब की जगह में गणित और नेचुरल फिलासफी के 'एक्टिङ्ग' प्रोफेसर नियुक्त किये गये। यह पद दुर्लभ्य विख्याति का चिन्ह स्वरूप था॥

१८४७ में माधव राव ने मद्रास एकौनटेन्ट जनरल के आफिस में प्रवेश किया और अप्रैल १८४९ तक उसी काम को योग्यता के साथ करते रहे। इसी समय त्रावनकोर के राजा को अपने युवराजों को पूर्ण शिक्षा के हेतु एक योग्य अध्यापक की आवश्यकता पड़ी। माधवराव इस कार्य के हेतु शिफारिस करके भेजे गये। उस समय उनकी अवस्था केवल २१ बर्ष की थी। तथापि उन्होंने ऐसी योग्यता और सफलता के साथ कार्य-कुशलता दिखलाई कि महाराजा ने उन्हें १८५३ ई० में अपने यहां की 'पब्लिक सरबिस' में भरती किया।

डिप्टी पेशकार की जगह से वे राज्य के काम काज में सर्वोच्च पद दिवानी तक पहुंचे और इस पद पर १४ बर्ष तक बने रहे।

सन् १८५८ से १८७२ तक त्रावनकोर का राज्य शासन वस्तुतः सर माधवराव ही के हाथ रहा। उन्हों ने एक दम बड़े २ सुधार जारी किये जिस से उनमें एक योग्य और सफल शासक होने के चिन्ह पाये गए। सर माधवराव ने राज्य के व्यापार की खूब उन्नति की दीवानी और फौज़दारी अदालत की प्रचलित प्रथा का पुनर्वार संशोधन किया। सर्वसाधारण सम्बन्धी शिक्षा के हेतु उत्तम नियम बनाये, औषधालयों की आवश्यकता की पूर्ति की और पबलिक वर्क्स की तरतीब भी उदार भाव सहित जारी की। यद्यपि इन सब कामों से राज्य का खर्च बहुत बढ़ गया तथापि वार्षिक आमदनी पहिले की अपेक्षा अधिक होने लगी।

३० अप्रेल सन् १८६६ ई० को सरकार ने माधवराव को के. सी. एस. आई. की पदवी से सुशोभित किया।

मद्रास के गवर्नर नेपियर साहब ने तब कहा था । यह राजकृपा की चिन्ह स्वरूप पदवी जो आप को मिली है यह बात ज़ाहिर करेगी कि हमारी दयालु सरकार का ध्यान और उदारता अपने आश्रितों में ही बद्ध नहीं है किन्तु श्रीमती महारानी विक्टोरिया उनका भी मान करती हैं जो देशी राजा तथा वहां की प्रजाओं की ईमानदारी से सेवा करते हैं ।

परिश्रम और चतुराई के सहित महाराजा की सेवा में लगे रहिये और महाराजा के बुद्धिबल और सद्गुण का प्रभाव लोगों पर डालिये । जिस महत् कार्य में आप नियुक्त हैं वह स्थानीय और क्षणिक विख्याति से बढ़ कर है । स्मरण रखिये कि उत्तम हिन्दुस्तानी मंत्री के जो जो कर्तव्य आप कर रहे हैं उसका इङ्गलैण्ड की राजनीति और भावी नेटिव गवर्नमेण्ट (देशी राज्य शासन) में बड़ा भारी चिरस्थायी प्रभाव होगा ।

मई सन् १२७२ में सर माधव राव ने त्रावनकोर की दीवानी का इस्तीफा देदिया उनको तब ५००) मासिक पेन्शन मिलता था । इसी ई० में वाईसराय ने माधवराव को अपनी लेजिसलेटिव कौन्सिल में एक सीट देना चाहा । प्रान्तीय गवर्नर ने भी माधवराव की खूब विनय की किन्तु खानगी कारणो के हेतु उन्हें इसे इनकार करना पड़ा ।

माधवराव सन् १८७५ से १८८३ ई० तक बरोदा के भी दीवान रहे । वहां भी उन्हों ने उत्तमोत्तम सुधार किये और राज्य का प्रबन्ध अच्छी तरह से किया ।

इन्दौर में भी वे ३ वर्ष तक दीवान थे यहां भी राज्य का प्रबन्ध और सुधार चतुराई से कर राजा प्रजा में खूब ही प्रेम बढ़ा दिया । बरौदा के दीवान का पद त्याग कर मद्रास में आकर रहने लगे । समय २ A Native Thinker और A Native Observer के नाम से छोटे२ लेख लिखते रहे और वहीं उनकी मृत्यु भी हुई । एक समय उन्हों ने कहा था । छोटे२ लेख लिखने वाले साधारण लेखक सर्वसाधारण की बहुत भलाई कर

सकते हैं जितनी बड़े २ लेखकों से नहीं हो सकती है। जिस प्रकार तीसरे दरजे के यात्रियों से दूसरे और पहिले दर्जे के यात्रियों की अपेक्षा रेलवे को अधिक पैसे मिल सकते हैं।

सर माधवराव की वक्तृतायें बड़े जोश की और सदुपदेशों से भरी हुई होती थीं। सफलता प्राप्त करने की दो बातें एक बार उन्होंने यह कही थीः—

Each individual should resolve to do some good according to his means and opportunities and as often as may be possible (प्रत्येक मनुष्य को अपने धन और अवसर के अनुसार जितनी बेर हो सके कुछ न कुछ उपकार करने को निश्चय कर लेना चाहिये)

सन् १८८१ ई० में अपने कानवोकेशन एड्रेस में उन्होंने विद्यार्थियों को बहुत अच्छा उपदेश दिया है हम अपने मित्रों से अनुरोध करते हैं। उसे पढ़ें वह अतीव शिक्षाप्रद और प्रजारञ्जक है।

पांडेय लोचन प्रसाद

हम लोग गिरतेही जाते हैं।

समाचार पत्र और थोड़े से पढ़े लिखे लोग गला फाड़ २ चिल्ला रहे हैं और सिद्ध करते हैं कि हम लोग तरक्की कर रहे हैं और अब तो स्वदेशी ज़ोर पकड़ता जाता है देखतेही देखते देश उन्नति के शिखर पर लपक कर झट चढ़ जायगा। किन्तु यह तो महाजनों की बही का सा हाल हम पाते हैं "कागज़ देखे धन बहुत घन देखे धन नाहिं" मीटिङ्ग और सभाओं में बाबू साहब बक्तृता के जोश में ज़मीन और आसमान का कुलाबा मिलाते हुये सिद्ध कर देते हैं। "यह सभ्यता का समय है भारत भूमि और स्वर्ग का ४ अंगुल का अन्तर रह गया है घबड़ाइये नहीं बस अब लिया है" ईश्वर कुशल करे भारत भूमि का स्वर्ग के साथ "कोलीज़न" रगड़ होने पर क्या गज़ब होनेवाला है। हम तो भीतरही भीतर पोले पड़े जाते हैं अकाल और प्लेग एक दिन के लिये चैन नहीं

लेने देता विलाइत वाले जुदाही भारतमें कुबेर का खज़ाना गड़ा हुआ मान रहे हैं उधर लेबचरार सिद्ध करते हैं हम उन्नति कर रहे हैं। इसकी पंचाइत हम अपने विज्ञ पाठकों पर छोड़ते हैं हकीकत हाल क्या है फैसला करले।

देश सेवा महत्व।

धन का महत्व, प्रभुता का महत्व, ऊचे पद पर पहुंचने का महत्व, उच्चकुल प्रसूत होने का महत्व, विद्या का महत्व, किसी तरह दुर्लभ नहीं है बहुतों को इस महत्व के कारण बड़े से बड़ा फायदा पहुंच रहा है। पर देश सेवा का महत्व ऐसे ही कोई बड़ भागी हैं जिन्हें मिला है। यूरोप और अमरिका के उन्नतिशाली देशों में कोई ऐसा घराना चाब होगा जिसमें दो एक व्यक्ति उस घराने के इस महत्व को न पहुंचे हों। जापान में तो एक २ बालक प्राण पन से देश सेवा के लिये सन्नद्ध है। ऐसी बात से उन्हें घिन और चिढ़ है जिससे उनका जाती फायदा हो पर देश का उससे कुछ अकल्याण या नुकसान है। हमारे यहां अपने थोड़े से फायदे के लिये भड़ भूंजे के भार में देश को झोंक देने को लोग तैयार बैठे हैं। अफसोस इन धुरुषार्थ विहीनों को मौका ही नहीं मिलता कि अपने इस हुनर को प्रगट कर दिखावें। जब कभी इस तरह की बात आ पड़ती है तो ये उतरा चढ़ी कर उस मौके को कभी हाथ से नहीं जाने देते और अपने भरसक नहीं चुकते। उनके निज का फायदा हो या न हो पर देश का बिगाड़ हो जाय कुछ परवाह नहीं। कलकत्ते के मारवाड़ी इसका उदाहरण हैं जो बड़े बड़े हौसों की दलाली में डिसकौंठ के थोड़े से फायदे के लिये देशी माल को नहीं बिकने देते। ऐसा ही यहां के महाजनो का क्रम देखा जाता है। ऐसी उतरा चढ़ी करते हैं कि अपना नुकसान तक सह लेते हैं और गवर्नमेंट उनकी इस मूर्खता का भरपूर फायदा उठाती है। ध्यान देने लायक है जापान सरीखे उन्नतिशाली देशों में सर्व साधारण को अपने देश के महत्व की

चोट है यहां पढ़े लिखों में भी बहुत कम ऐसे लोग हैं जिनमें आत्म त्याग का अंकुर हो और देश के मुकाबिले अपने निजके महत्व को छोड़ बैठे हों। जब यह हाल है तो इतने बड़े देश में गोखले तिलक मालवीय सरीखे इने गिने देश सेवी हुये तो उतने से क्या होता है। एक चना कभी भार फोड़ सकता है। फिर भी देश सेवियों की ऐसी महर्घता में इन महात्माओं को धन्यबाद है। उसके अहोभाग्य हैं जिसे इन महा पुरुषों की चरण रज माथे पर चढ़ाने को मिल जाय। देश सेवा के कारण जो महत्व को पहुंचे हैं सफल जन्म उन्ही का है। जब देश में एक २ आदमियों को इस महत्व तक पहुंचने की चोट हो और इसके पाने का उत्साह बढ़े देश का सच्चा सुधार और मुल्क की सच्ची तरक्की तभी होगी।

पुस्तक समीक्षा

बाल रामायण

बाल भारत के ढङ्ग पर उसी इण्डियन प्रेस की छपी यह पुस्तक है प्रकाशक इसके ज़िला मेरठ निवासी रामजी लाल शर्मा हैं मूल्य ॥) भाषा इसकी सब के समझने लायक है मूल्य भी उचित रक्खा गया है।

हिन्दी ग्रन्थमाला

मासिक पुस्तक

हम उन दांभिकों को दूरही से नमस्कार करते हैं जिनको मातृ भाषा में केवल दिखलाने मात्र को प्रेम है जो इसके सच्चे प्रेमी हैं और अच्छे २ लेख से हिन्दी साहित्य का भंडार भरा चाहते हैं उन्हें अवश्य इसका ग्राहक बनना चाहिये इसका मूल्म ३) वार्षिक है। पता व्यवस्थापक हिन्दी ग्रन्थ माला नागपूर।

स्वदेशी आन्दोलन और बायकाट

माननीय तिलक महोदय ने इस पुस्तक में भारत की उन्नति का एक मात्र उपाय बतलाया है। यह प्रबन्ध पहले केशरी नाम के मराठी

भाषा के पत्र में प्रकाशित हुआ था जिसके सम्पादक श्रद्धास्पद तिलक महोदय हैं। माधवराव सप्रे ने हिन्दी में इसका उल्था कर पहले ग्रन्थ-माला में छापा था इसलिये इस पुस्तक रत्न के धन्यबाद पात्र सप्रे महाशय हैं मूल्य इसका ≈)॥ है। हमे यह प्रकाश करते बड़ा हर्ष होता है कि सप्रे महाशय हिन्दी साहित्य की उन्नति जी से चाहते हैं। इन्होंने रामराव स्मारकफंड खोला है जिसमें दो हज़ार रुपये की आवश्यकता है उसके व्याज से हिन्दी के ग्रन्थ लिखने वालों को पारितोषिक दिया जायगा। जिसमें ६०८ रुपये इकट्ठे हो चुके हैं और ये रुपये बङ्गाल बङ्क नागपूर के सेक्रेटरी के पास जमा रहेंगे हिन्दी साहित्य के वृद्धि की यह उपाय सराहने योग्य है।

भारत की वर्तमान दशा

यह पुस्तक जगन्नाथ चतुर्वेदी कृत एक अङ्गरेज़ी किताब का अनुबाद है। इसे पढ़ हम जान सकते हैं इस वर्तमान् शासन में हमारी क्या दुर्दशा है और इतनी दुर्दशा सहकर भी गुलामी का झंडा उठाये नौकरी पाने के लिये कटे मरते हैं और स्वच्छन्द व्यवसाय नहीं किया चाहते। पता मैनेजर हिन्दी ट्रैन्सलेटिङ्ग कम्पनी बड़ा बाज़ार कलकत्ता।

पीयूष प्रवाह

इस पीयूष का प्रवाह बहुत दिन हुए सुग्रहीत नामधेय पं० अंबिकादत्त व्यास जी के समय प्रारंभ हुआ था। व्यास जी जैसे सीधे सादे थे वैसा ही इसे भी प्रवाहित करते चले गये पर अब दो मास से बड़े चटकीले वेश भूषा के साथ इसमें स्वर्गीय पीयूष की फिर लहर आ गई है इस पीयूष रस का स्वाद चखना हो तो १॥) भेज कर इसके ग्राहक बनिये। लेख उत्तम होते हैं यदि बराबर ऐसे ही होते जांय।

स्वदेश प्रचार के उपाय

यह प्रबंध गङ्गाप्रसाद गुप्त की लेखनी का विकाश बड़ा ही चित्ताकर्षक है पर केवल स्वदेशी स्वदेशी रटने ही मात्र से काम न चलेगा

लोगों को स्वदेशी के वर्तने पर आमादा करना चाहिये। केवल स्वदेशी के बर्तने से भी हमारे देश का दरिद्र दूर न होगा जब तक Free trade वाली पालिसी के अनुसार हमारे देश की पैदावार बाहर जाना बन्द न होगी। थोड़े धन में कच्चा बाना हमसे ले लोहा लक्कड़ हमारे माथे मिढ़ बिलायत वाले बीस गुना भर लेते हैं। दूसरे यह कि रूई आदि कच्चा बाना जब न रहेगा तो हम स्वदेशी में कहां तरक्की कर सकैंगे। पूंजीवाले अपने थोड़े फायदे के लिये सब पैदावार खरीद विदेशों में भेज देते हैं मंहगी और अकाल अटल रूप में यहां छाया रहता है। अल्पवित्तवालों का मंहगी जिन्स खरीदते २ चूर ढीला होता जाता है मूल्य इस पुस्तक का -) है।

स्मार्त मर्म

श्री मधुसूदन गोस्वामी रचित। वैष्णव धर्म तथा वैष्णव संप्रादय इसमें सर्वोत्कृष्ट सिद्ध की गई है। गोस्वामी जी ने अपने पाण्डित्य के मर्म को स्मार्त मर्म के ब्याज से बड़ी योग्यता के साथ इसमें प्रगट किया है। बिना मूल्य केवल पोस्टेज भेज देने से यह पुस्तक मिल सकती है। देवकी नन्दन प्रेस वृन्दाबन की छपी है।

सुधासिन्धु

१ शीशी का दाम ॥) है। यह नाम ही की सुधा नहीं है वरन काम भी इसका नाम के अनुसार है जो इसके विज्ञापन से प्रगट है हाथ कङ्गन को आरसी क्या एक शीशी मंगाय अजमा लीजिये।

विरक्त ऐसे होने चाहिये ॥

श्री स्वामी शंकराचार्य के मत का यहां एक मठ है मूल पुरुष इसके व्याघ्राम्बर बड़े महात्मा हो गये हैं जिन्हों ने अपने बहुत से करामात दिखला अकबर आदि बादशाहों से मठ के लिये कई ग्राम माफी प्राप्त किये थे। पर बीच में इस मठ के जो अधिकारी होते गये उनकी बेपरवाही

और आलस्य से ग्रामों का भरपूर इन्तिज़ाम न होसका और जहां तहां लोग उसे दबाने लगे थे कि ऐसे समय स्वामी पुरुषोत्तम गिरिजी मठाधिकारी हो अपने योग बल तथा अन्यान्य उपायों से मठ की सब जायदात को अच्छी तरह अपने पूरे अधिकार में लाये, प्रीवी कौंसिल तक मुकद्दमा लड़े अब इस समय मठ की सब जायदात एक छोटी सी रियासत हो रही है। पुरुषोत्तम गिरिजी बहुत दिनों से इस बिचार में थे कि कोई योग्य पुरुष मिले तो इसे सौंप जिसमें महात्मा की अर्जित यह जायदान नष्ट न हो मै पूर्ववत् योग साधन में लगूं। ७ नवम्बर को अपना उत्तराधिकारी स्वमी रामकृष्ण जी को नियत कर आप पूर्ववत् योग साधन और देश २ धर्म प्रचार में प्रवृत्त हुये इसी को हम सच्ची विरक्ति कहेंगे। रामकृष्ण जी बड़े बिद्वान् और सच्चरित्र हैं आशा है पाठशाला तथा कई एक धर्म के कार्य जो पुरुषोत्तम गिरिजी स्थापित कर गये हैं उसकी बिशेष उन्नति करेंगे।

इसे भी पढ़ लीजिये।

ईश्वर को और ग्राहकों को धन्यवाद है जिनकी दया दृष्टि से यह अठ्ठाइसवां बर्ष भी समाप्त हुआ प्रार्थना है हमारे अनुग्राहक ग्राहक अपना २ मूल्य भेजदें जिसमें प्रतिमास तकाज़े का कार्ड हमें न भेजना पड़े और ग्राहक पीछे एक पैसे की बचत हो किमधिकम्।

REGISTERED No. A—308.

हिन्दी प्रदीप

शुभ सरस देश सनेह पूरित प्रगट ह्वै आनन्द भरै।
बचि दुसह दुरजन वायुसों मणिदीप सम थिर नहिं टरै॥
सूझै विवेक विचार उन्नति कुमति सब यामें जरै।
हिन्दी प्रदीप प्रकाशि मूरखतादि भारत तम हरै॥

जनवरी १९०७

मासिक पत्र

जि० २९ सं० १

सम्पादक और प्रकाशक पंडित बालकृष्ण भट्ट प्रयाग

विषय सूची

सभायें पुस्तकालय और विद्यार्थियों तथा असमर्थों से अग्रिम १॥।=)
समर्थों से ३।=) पिछले अङ्कों की पूरी जिल्द फी जिल्द मै पोस्टेज २)

यूनियन प्रेस इलाहाबाद में मुद्रित हुआ

—:००:—

जि० २९ } प्रयाग { जनवरी
सं० १ } { सन् १९०७ ई०

हमारा नया साल।

जगदाधार, जगदेकबन्धु, परात्पर, परमात्मा की कृपा से आज हमारा अट्ठाईसवां साल समाप्त हुआ अब उनतीसवें में पांव पसारते हैं-इसका विशेष धन्यवाद हमारे पढ़ने वालों को है जिनके हम बड़े उपकृत हैं-सुधा समान जिनकी कृपा वारिद की वर्षा के अमृत जल से सिंचित यह पौधा बीच बीच कई वार मुरझाते २ बच कर टटका और हरा भरा बना रहा-यों तो होनहार को कौन जान सक्ता है कि आज क्या है और कल क्या हो, कहावत है-"घड़ी घड़ी घड़ियाल बजावै कौन घड़ी धो कैसी आवै" इन्द्र जाल और मय की दानवी माया का कौतुक, जिसे

देख चित्त चमत्कृत हो अचरज में आ जाता है सो भी इस भवितव्यता होनहार के आगे हेच है-किन्तु यह कहेंगे कि अब हमारे में प्रौढ़ता आ गई है, हिन्दी साहित्य रसिकों में हमारे लेख का गौरव होने लगा है। इस सब के धन्यबाद का "एसेन्स" निष्कर्ष उन्हीं इने गिने थोड़े से रसिकों को है जिनसे हमारा परस्पर का कुछ ऐसा लगाव होगया है कि उनके बिना न हमे चैन है न हमारे बिना उन्हे कल होगी-इस वर्षारंभ के आमोद प्रमोद में हम अपने पाठकों की जो कुछ सेवा करें सब कम है-किन्तु मुफलिस कल्लांच पास झंझी नहीं क्या करें लाचार हो पुष्पाञ्जली की भांत काव्यवाटिका के चुने हुये फूलों का यह गुच्छा उनकी भेट करता हूं- यह तुच्छ भेंट कुछ भी उनको हृदयंगम हुई तो मैं अपने को कृतकृत्य मानूंगा-

अप्यस्ति कश्चिल्लोकेस्मिन्येन चित्तमदद्विपः-नीतः
प्रशमशीलेन बन्धनालानलीनताम्

कोई ऐसा पुरुष संसार में है जिसने चित्त मत वाले हाथी को संयम Controle के "आलान" खूटे में बांध रक्खा है? निस्सन्देह चित्त ऐसा चंचल है कि इसे काबू में लाना बहुत ही कठिन है-

परस्य पूर्णगुणतामात्मनस्तद्विहीनताम्-दृष्ट्वा
को नाम नायाति मात्सर्यस्य बिधीयताम्

किसी को किसी गुण में पूर्ण देख और अपने को उस गुण से हीन पाय कौन ऐसा है जिसे डाह न होती हो-

अपर्युषितसत्वानां स्वाधीना सर्वसिद्धयः-

जिनका पुरुषार्थ सदा टटका बना रहता है उनके आगे बड़ी २ सिद्धियां हाथ बान्धे खड़ी रहती हैं-

नह्ययविश्रान्तचित्तानां क्रिया काचित् प्रसीदति-

जो स्थिर चित्त न हो सदा उतावले रहते हैं उनका कोई काम सिजिल नहीं होता ॥

पैशून्यासत्यपारूष्यभिन्नवादोज्झितं वचः-स
दैव वदने येषां तेषां सर्वाशिषा दिशः

चुगली चवाई झूठ और निठुराई जिनकी बोल चाल मे नहीं है वे जहां जांयगे वहीं कदर के लायक होंगे-

धीरेव धन्यं धनमुन्नतानां विद्यैव चक्षुर्विजिते-न्द्रियाणाम् दयैव पुण्यं पुरुषोत्तमानां आत्मैव तीर्थं शुचिमानसानाम् ।

ऊंची तबियत वालों को बुद्धि ही बड़ा धन है-जो इन्द्रियां और मन को बश में किये हैं उनको विद्या ही नेत्र है-उदार भाव रखने वाले पुरुषरत्नों को दया ही बड़ा पुण्य है जिनका मन पवित्र है उन्हें आत्मा ही तीर्थ है

सेवाविक्रीतकायानां स्वेच्छा विहरणं कुतः

जिन्हों ने सेवा में अपने शरीरको बेच डाला उन्हे स्वेच्छाविहार कहां ।

दिक्षु धावन्ति पापानां सुगुप्तमपि पातकम्

पापियों के छिपे से छिपे पाप आप से आप सब ओर दौड़ा करते हैं ।

मनसः स्फटिकस्येव नविद्मः केन वर्त्मना ।
रागः कोपि विशत्यन्तर्नापैति क्षालितो पि यः ।

बिल्लौर की नाईं मन में "राग" रङ्ग या राग द्वेष न जानिये किस रास्ते से भीतर पैठ जाता है कि इसे कितना ही धोओ दूर नहीं होता ॥

चित्ताभ्रंशेस्ति मे वृत्तिः वृत्तिभ्रंशे तु का गतिः ।

धन चला गया हमारे में नेक चलनी है तो हम अपना काम चला सक्के हैं; नेक चलन भी न रहे तो क्या ठिकाना ॥

—— :o: ——

आरभेतैव कर्माणि श्रान्तः श्रान्तः पुनः पुनः ।
कर्माण्यारभमाणं हि पुरुषं श्रीर्निषेवते । मनुः-

कामों को करता ही जाय, एक बार किसी काम को आरम्भ किया और कामयाब न हुये तो भी हतोत्साह न हो फिर उसे करैं-जो इस तरह दृढ़ रह अपना काम करते रहते हैं उनको लक्ष्मी आप से आप आकर सेवती हैं । वेदान्ती कर्म का खण्डन करते हैं और कर्म को बन्धन का हेतु मानते हैं; भले या बुरे जितने काम सब परिणाम में फल के जालमें जीव को ऐसा फसा लेते हैं कि उससे इसका उद्धार होता ही नहीं ।

'पुनरपि जननं पुनरपि मरणं पुनरपि जननीजठरे शयनम्'

बार २ जन्म लेता और मरता हुआ यह जीव कभी मुक्ति पाताही नहीं ॥

पहले तो बड़ी कच्ची और हसने के लायक यही एक बात है कि भला बुरा दोनों सहोदर भाई के समान हैं भला मानो बुरे का जेठा भाई है । ऐसा माननेवालों की अकिल पर पहले तो हमे तर्स आता है फिर क्रोध होता है कि पीछे २ ऐसी ही ऐसी समझने तो देश को गिरा दिया और हम इस दशा को पहुंचे अब आगे और क्या होनहार है । ध्यान देनेलायक है कि तलवार उठाय किसी बेकसूर की गरदन धड़ से अलग कर देना जो बुरे से बुरा काम है और कोई बे कसूर नाहक मारा जाता है दया का भाव मन में लाय कोशिश कर उसकी जान बचा देना जो निहायत भला काम है दोनों एक ही काम हुए और उससे हमारी मुक्ति में बाधा आती है तो ऐसी मुक्ति को दूरही से नमस्कार है । मुक्ति के माने छुटकारा पाने के हैं; बुराई से हमारा छुटकारा हो मुक्ति के यदि यह माने हैं तो यह मुक्ति हमे ग्राह्य है, साथ ही जो भलाई से भी हमे छुट्टी मिलती है तो अकर्मराय काहिलों की मीरास इस मुक्ति को ले हम क्या करेंगे । हमे चाहिये कि हम डट कर काम

करने में प्रवीण और कुशल हों-गीता में भगवान् का वाक्य यदि सत्य है तो बड़े २ देशोद्धारक कर्मशूर जिन्हें देश के उद्धार की चोट थी स्वामी रामतीर्थ स्वामी दयानन्द सरीखे कहीं जन्म ले चुके होंगे फिर प्रगट हुआ चाहते हैं। ऐसे कर्मराय कर्मशूर मुक्ति कभी नहीं चाहते, अपने देश तथा देश बान्धवों को क्षति ग्रस्त और अवनति के चंगुल से मुक्त कर देनाही उनकी संप्रदाय में मुक्ति है—अपने सेव्य प्रभु के अनन्य भक्त और सच्चे देश हितैषियों से मुक्ति लंडूरी छिपी फिरती है सन्मुख आने की हिम्मत नहीं करती-मुक्ति का नाम लै अकर्मण्यों के सिरदार यती संन्यासियों ने अब तक हिन्दुस्तान को मन माना लूटा खाया, देश का देश बेहोश मुग्ध पड़ा था मुक्ति लोगों को गुमराही में घसीटती फिरी। अब जो नेत्र खुले होश आई तो इस नटिन की कला बाज़ी पर हंसी और अफसोस होता है. स्वामी रामतीर्थ का "प्राकृटिकल" वेदान्त याद आता है जो हमारी इस वर्तमान गिरी दशा में हमें बड़ा भारी सहारा है। मौत का दिन करीब होने तक बराबर काम करने से कभी न थकना जिस का पहिला उसूल है। इसी से मनु महाराज ने "श्रान्तः श्रान्तः पुनः पुनः" कहा है-जिस से सिद्ध है कि आधुनिक वेदान्तियों की मुक्ति निरी काहिलों की ख्वाब गाह है, ज़बान मात्र से ब्रह्मास्मि कहने वालों का भ्रम या धूर्त प्रलाप है, आकाश कुसुम और शशशृङ्ग सदृश बे बुनियाद है। हम ब्रह्म हैं ऐसा न समझ सब मनुष्य मात्र उस सच्चिदानन्द परमात्मा की विभूति हैं हमारे और उनके में कोई अन्तर नहीं है तब दूसरे मनुष्य का अनहित करना मानो अपनी ही हानि या अनहित करना है। मनुष्य मात्र के साथ यह भाव न हो सके तो अपने मुल्क या देश के साथ यह भाव तो होना ही चाहिये। जहां के आदमियों में यह बुद्धि आ गई है वही देश तरक्की की सीढ़ी पर चढ़ता जा रहा है। जब तक वेदान्त के इस सिद्धान्त पर हम लोग दृढ़ रहे हमारे में किसी तरह की कमज़ोरी नहीं आई थी। दृढ़ता गहे रखना वेदान्त

का मुख्य उपदेश है दूसरे सुख दुःख या हानि लाभ में एकसी मनोवृत्ति का रहना दुख में उदास हो हिम्मत न हारना अभ्युदय मे घमण्ड से किसी को कुछ माल न समझना इस तरह का कर्म कुशल संसार के बड़े उपकार का है तब हम कैसे माने कि असली वेदान्त हम से संसार छुटवाता है और काम करने से हमें रोकता है ।

पाप और पुण्य ॥

हमारे यहां पुरानी अकिल वाले कह गये हैं "धर्मस्य सूक्ष्मा गतिः"। अर्थात् "क्या करने या कहने से पुण्य है और क्या करने या कहने से पाप है" सो बहुत ही ठीक है । मनुष्य जीवन में अनेक तरह के पाप और पुण्य बना करते हैं उन सबों का बिचार हम इस समय नहीं करते बरन एक खास किस्म के पाप का जो हम प्रतिक्षण सोते जागते चलते फिरते उठते बैठते कहां तक कहें प्रत्येक श्वांस लेने तक में करते रहते हैं । उसे हम अपने पढ़ने वालों को बतलाया चाहते हैं और उस से बचने को उन्हें चौकस किया चाहते हैं । वह पाप बिलाइत की बनी बस्तुओं का काम में लाना है । हम अपना शौक पूरा करने को, अपनी अमीरी निबहने को, अपना कमरा सजाने को, मोहफिल आरास्ता करने को, भाई बिरादरी के बीच नाक कट जाने से बचाने को; जो कुछ करते हैं कहीं ऐसा नहीं है जिसमें यह पाप हम से न बन पड़े । इसी से कहा गया है कि पाप अथवा पुण्य की बड़ी सूक्ष्म गति है । कभी २ को जानते भी हैं कि यह पाप है पर निभता नहीं लाचार हो पाप कर्म करनाही पड़ता है । पाप कर्म से बचने और पुण्य संपादन का सहायक बायकाट का सिद्धांत बहुतही उत्तम है; बायकाट के उसूल पर चलना सहज भी है केवल दृढ़ता अपने में आ जाना चाहिये । हमारे ब्राह्मण देवता चाहें तो इस पाप से लोगों को सहज में उबार सकते हैं । हम यह नहीं कहते कि वे अपने लोभ को कहीं से कम कर

दें वरन वे प्रजा को ऐसा ही लूटते खाते रहैं जैसा अब तक करते रहे। पोथियों को पढ़ने के समय केवल इतना कह दिया करें कि जो बिदेश की बनी बस्तु दान कर ब्राह्मन को देगा वह नरक में जायगा और देशी चीज़ दान देने में दस गुना पुण्य है। बरन् वह प्राणी जो सदा देशी वस्तु ब्राह्मन को देता रहा उसे इन्द्र महाराज स्वयम् विमान पर चढ़ा कर ले जाते हैं और अपने आधे आसन पर उसे बिठा देते हैं। अन्त को इस दांत किट्टन का सारांश यह है कि बिदेशी को बैपरने के समान पाप नहीं और न स्वदेशी को बैपरने के बराबर पुण्य है 'इदमेव समासेन लक्षणं पुण्यपापयोः"

—०—

पोरस ॥

जब यूनान निवासी प्रसिद्ध दिग्विजयी सिकन्दर ने उत्तर पश्चिम की ओर से भारत पर आक्रमण किया उस समय तक्षशिला के राजा आम्फिस ने तो उस से मेल कर लिया पर पंजाब के स्वामी पोरस ने उस का भरपूर साम्हना किया था और उस की शूरता पर सिकन्दर इतना प्रसन्न हुआ कि यद्यपि उसे पराजित कर चुका था तथापि उसका राज्य उसे फेर दिया॥

पञ्जाब के राजा का नाम पोरस यूनान के निवासियों ने लिखा है और भारतवर्ष के प्राचीन संस्कृत ग्रन्थों में इस राजा वा उस के विरोधी सिकन्दर का नाम तक नहीं देखने में आता। अर्वाचीन इतिहास लेखकों ने अनुमान किया है कि यह राजा पोरस या तो पुरु नाम का कोई मनुष्य था अथवा पुरुवंशी राजा रहा होगा। संस्कृत में पुरु के सन्तानों को पौरव कहते हैं। पौरव ही का नाम यूनान वालों ने पोरस बना लिया। महाराज पुरु चन्द्रवंश में पुरूरवा से चौथी पीढ़ी में उत्पन्न हुए थे और पीछे से इन का वंश दूर२ तक भारत के भिन्न२ भागों में फैला और प्रतापशाली हुआ। विचार का अवसर है कि जब सिकन्दर

भारत में आया उस समय इस वंश का राज्य पञ्जाब में था वा नहीं। यदि उस समय पञ्जाब में पुरुवंश रहा हो तो अर्वाचीन इतिहासों की बात ठीक होवे अन्यथा यदि कोई दूसरा राजवंश रहा हो तो उसी का पता लगाया जावे। पोरस का नाम जो पुरु बतलाया गया है यह भी बिना उचित अनुसन्धान के न मान लेना चाहिये।

चन्द्रवंशी महाराज पुरूरवा की राजधानी गङ्गा तीर पर प्रतिष्ठान पुर नाम की नगरी थी जहां अब झूसी नाम का एक छोटा सा गांव रह गया है। उन के पोते महाराज नहुष हैं जिन्हें इन्द्रासन भी मिला था। नहुष के पुत्र ययाति हैं जिन के पांच प्रसिद्ध पुत्र हुए। इन में सब से बड़े महाराज यदु हैं जिन के पुत्रों में से दो की शाखाओं में प्रसिद्ध राजवंश चला था। एक के वंश में प्रसिद्ध सहस्त्रार्जुन माहिष्मती के राजा थे जिन ने परशुराम से विरोध ठाना था और इन्ही के वंश के लोग हैहय और तालजंघ क्षत्रिय कहलाते हैं-इन लोगों ने सूर्यवंशी राजा सगर के पिता को मार उन का राज्य छीन लिया और उन की सहधर्मिणी को जो बन में भाग आई थी बिष पिला दिया। यदु की दूसरी शाखा उन के पुत्र क्रोष्टु के द्वारा चली जिस में विदर्भ चेदि और शूर सेन आदि देशों के राजा हैं। शूरसेन ही के राजवंश में भगवान् श्री कृष्णचन्द्र जी अवतीर्ण हुए थे। ययाति के शेष पुत्रों के भी कई एक राजवंश चले हैं जिन में अङ्ग वङ्ग कलिङ्ग मद्र केकय आदि बहुत प्रसिद्ध हैं।

महाराज पुरु के वंश में दुष्यन्त और भरत प्रतापी चक्रवर्त्ती राजा हुये। भरत ही के नाम से हिन्दुस्तान की भूमि का नाम भारतवर्ष पड़ा। भरत से चौथी पीढ़ी में महाराज हस्ती हुये इन ने गङ्गा तट पर हस्तिपुर नाम नगर बसाया जो अब मेरठ के ज़िले में उजाड़ पड़ा है। हस्ती के पुत्र अजमीढ़ और द्विमीढ़ वंश चलाने वाले हुए। अजमीढ़ की तीन रानियों से तीन भिन्न २ वंश चले। अजमीढ़ के परपोते महाराज कुरु थे

जिन के नाम से कुरुक्षेत्र की भूमि प्रसिद्ध हुई। कुरु से फिर चन्द्र वंशियों की दो शाखायें फूटीं जिनमें से एक में तो मगध के राजा वृहद्रथ जरासन्ध आदि और दूसरे से धृतराष्ट्र तथा कौरव और पाण्डु तथा पाण्डव लोग हैं। इस प्रकार से महाभारत के युद्ध के समय में पूरु के वंश की पांच भिन्न २ शाखायें भारतवर्ष के भिन्न २ भागों में प्रतिष्ठित थीं।

द्विमीढ़ के वंश का अन्तिम राजा बहुरथ महाभारत के युद्ध के समय में उपस्थित था बहुरथ के पीछे इस वंश का पता नही लगता। अनुमान होता है कि यहीं पर इस शाखा की समाप्ति है। वैसे ही अजमीढ़ की जो शाखा वृहदिषु के द्वारा चली सो उदक्स्वन के पुत्र भल्लाद तक पहुंच के कुरुक्षेत्र युद्ध के लगभग समकाल में लुप्त हो गई। जो शाखा अजमीढ़ के पुत्र नील के द्वारा चली उस का राज्य पाञ्चाल देश में रहा। इसी वंश में द्रौपदी के पिता महाराज द्रुपद हैं जिन्हें द्रोणाचार्य ने महाभारत के युद्ध में बध किया। द्रुपद के पुत्र धृष्टद्युम्न भी कुरुक्षेत्र के युद्ध में पाण्डवों की ओर से लड़े और इन्ही ने पितृ घाती द्रोण का प्राणान्त किया धृष्टद्युम्न के पुत्र का नाम धृष्टकेतु था। अजमीढ़ की दूसरी शाखा की समाप्ति यहीं पर है।

कुरु के पुत्र सुधनु से मगध राजवंश चला जिन में से वृहद्रथ का पुत्र जरासन्ध महाभारत की लड़ाई के पूर्व युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के अवसर में भीम के द्वारा मारा गया। जरासन्ध के वंश का अन्तिम राजा रिपुञ्जय था।

कुरु के पुत्र जन्हु से जो शाखा चली उसी में कौरव और पाण्डव हुए जिन के बीच घोर युद्ध हुआ और जिन का इतिहास महाभारत में लिखा गया। युधिष्ठिर के भाई अर्जुन के पोते परीक्षित से यह वंश चला और कुछ दिन तक इन लोगों की राजधानी हस्तिनापुर और फिर कौशाम्बी रही। इस वंश का अन्तिम राजा क्षेमक था।

युधिष्ठिर के प्रपितामह महाराज शान्तनु के एक भाई का नाम बाल्हीक था जिन के पुत्र पौत्रों का अधिकार सिन्धु देश पर था। सोमदत्त का पुत्र जयद्रथ भी महाभारत के युद्ध में उपस्थित था। अर्जुनने युद्ध में सिन्धुराज जयद्रथको मार डाला था। इस शाखा की प्रतिष्ठा भी जयद्रथ के साथ समाप्त हुई।

निदान ऊपर के बर्णन से यह बात निर्धारित होती है कि पुरु की शाखा वाले परस्पर कुरुक्षेत्र में जूझ गये और युद्ध के अन्त में केवल दो शाखायें बच रहीं जिन में से एक तो परीक्षित तथा उन के सन्तानों में हस्तिनापुर तथा कौशाम्बी में रही और दूसरी जरासन्ध के वंश में मगध की राजधानी पटना वा पाटलिपुत्र में प्रतिष्ठित रही।

बाबू रमेशचन्द्र के अनुमानानुसार यदि महाभारत का युद्ध सन् ईस्वी से १२५० वर्ष पूर्व ही मान लिया जावे तो भी सिकन्दर के भारताक्रमण के समय तक न तो जरासन्ध का और न परीक्षित का वंश रह जाता है। यह तो इतिहास में प्रसिद्ध ही है कि सिकन्दर का समकालीन चन्द्रगुप्त का पिता महानन्द था और यह महानन्द पुरुवंशी नहीं बरन शिशुनाग वंशी था।

परीक्षित से क्षेमक तक जो पुरुवंशी राजा हुये उन के राज्य का अन्त सन् ईस्वी से ४७० वर्ष पहिले हो चुका था। वह वंश सिकन्दर के समय तक वर्तमान रहा होगा। पुरुवंशियों की किसी और शाखा ने यदि पञ्जाब पर अधिकार किया होता तो अवश्य उस का उल्लेख कहीं न कहीं मिलता ही।

उपरोक्त बातों से यही अनुमान दृढ़ और स्थिर होता है कि सिकन्दर का बिरोधी पोरस पुरुवंशी न रहा होगा।

यदि पोरस पुरुवंशी न रहा तो फिर किस वंश में इस का होना सम्भव है यह बात सोचना चाहिये। टाड साहिब राजस्थान के इतिहास में लिखते हैं कि सर टामस रो इत्यादि कई एक प्राचीन

युरोपियनों ने मेवाड़ के राना को पोरस का सन्तान बतलाया है। यह बहुत सम्भव है कि पोरस सूर्य वंशी राजा हो। मेवाड़ के राना अपने को बाप्पारावल का सन्तान बतलाते हैं। बाप्पारावल के पूर्वजों में से एक कनक सेन है जिस ने सन १४४ ई० में लाहौर को छोड़ सौराष्ट्र का मार्ग लिया और वहां पर जाके बलभीपुर को अपनी राजधानी बनाया। उस राजधानी को म्लेच्छों ने सन् ५२४ ई० के लगभग सत्यानाश किया पर एक गर्भवती रानी ने अपने प्राण के साथ मेवाड़ के रानाओं के वंशधर को बचाया। कनकसेन भगवान् रामचन्द्र के ज्येष्ठ पुत्र लव के वंश में श्रीरामचन्द्र जी से ६३ वीं पीढ़ी में था। इस का लाहौर में सन १४४ ई० में विद्यमान रहना ऐतिहासिक घटना है। अतएव अवश्य सम्भव है कि लव के वंशजों में से कोई राजा अयोध्या को छोड़ पञ्जाब में आ बसा होगा और राजधानी का नाम लवकोट रक्खा इसी का नाम पीछे से लाहौर हो गया। पुराणों में रामचन्द्र के ज्येष्ठ पुत्र का नाम कुश लिखा है और उन के वंश में अयोध्या के अन्तिम राजा का नाम सुमित्र लिखा है। लोग सुमित्र को विक्रमादित्य शकारि का प्रायः समकालीन बतलाते और ५६ वर्ष ख्रीष्ट से पूर्व में रखते हैं। पर सुमित्र का प्रपितामह प्रसेनजित् सन ईस्वी से ४८० वर्ष पूर्व निज पुत्र क्षुद्रक वा विरोधक के हाथ निहत हुआ। तदनन्तर केवल तीन ही पीढ़ी में ३१२ वर्ष का समय लगना बहुत अधिक असम्भव है। यदि २२ वर्ष प्रत्येक राजा का राज्यकाल माना जावे तो सुमित्र का समय लगभग ख्रीष्ट से ४०० वर्ष पूर्व पड़ता है, सम्भव है कि सुमित्र के वंशज (जिन का कि उल्लेख पुराणों में नहीं मिलता) अयोध्या को छोड़ लाहौर में जा बसे हों और पोरस उन्ही के वंश में कनकसेन का पूर्वज पञ्जाब का राजा हो। सर टामस रो का मेवाड़ के रानाओं को पोरस के सन्तान कहना इस अनुमान से पुष्ट होता है। सुमित्र के अनन्तर और कनक सेन के प्रपितामह महारित के पूर्व पांच राजाओं के नाम नहीं मिलते। पोरस सम्भवत; इन्हीं पांचो में से कोई होगा।

पोरस यह राजा का नाम था इस में भी कुछ संदेह हो सकता है। सिकन्दर के साथियों ने तो लिखा है कि पञ्जाब का राजा पोरस था। तक्षशिला के राजा ने सिकन्दर को पोरस से लड़ने के लिये प्रोत्साहित किया था। पञ्जाब तक्षशिला के पूर्व ओर है संस्कृत में पूर्व देश के निवासियों को 'पौरस्त्य' कहते हैं। अतएव सम्भव है कि तक्षशिला का राजा पञ्जाब तथा भारत के और २ निवासियों की संज्ञा 'पौरस्त्य' व्यवहार में लाता रहा हो। यूनान वालों ने इसी पौरस्त्य को राजा का नाम समझ अपनी भाषानुसार अपभ्रंश रूप पोरस ही उच्चारण किया और लिखा हो। इस अनुमान की पुष्टि में एक बात और कही जा सकती है कि पोरस नाम के दो राजा सिकन्दर के समय में भारत वर्ष में थे। एक पोरस पञ्जाब का राजा था और दूसरा उसी का भतीजा (वा भाञ्जा) था जिस ने पीछे से सिकन्दर से विद्रोह किया और चन्द्रभागा (चनाव) और इरावती (रावी) के बीच की भूमि में सिकन्दर ने उस का पीछा किया था। वह भी पूर्व देश बासी (पौरस्त्य) होने के कारण 'पोरस' ही कहलाया हो। टाड साहिब ने प्राचीन युरोपियन ग्रन्थ-कारों के लेख में उज्जैन के भी एक राजा का नाम पोरस पाया है और उसे 'पोवार' वा प्रमर वंशी ठहराया है। यहां भी युरोपिनों ने पूर्व देश निवासी ही को पोरस लिखा हो तो सम्भव है।

हरिमङ्गल मिश्र प्रयाग।

—०—

बिकास सिद्धान्त या विनाश सिद्धान्त।

"सरस्वती" के गत अगस्त महीने के अङ्क में "विकास सिद्धान्त" शीर्षक एक तीन पृष्ठ का लेख सम्पादक महोदय की लेखनी से लिखा प्रकाशित हुआ है। यह लेख उपयोगी और बिचारणीय है। द्वि-वेदी जी महाराज कुछ दिनों से अङ्गरेज़ी के उत्तमोत्तम बिचार पूर्ण ग्रंथों का हिन्दी भाषा में अनुबाद करने का सङ्कल्प कर हम लोगों का जो

प्रभूत उपकार कर रहे हैं उसे हम क्या, सभी मुक्तकण्ठ से स्वीकार करेंगे। मातृ भाषाभारती के ऐसे सुयोग्य सुपूत का हम अन्तःकरण से धन्यबाद करते हैं।

"क्रम विकास" सिद्धान्त के हमने दो एक लेख और पढ़े हैं पर मूल ग्रन्थ के अवलोकन का हमको सौभाग्य नहीं हुआ है। अतः हम यह कहने से हिचकते हैं कि मूल ग्रन्थकार का यथार्थ आशय क्या है। यह हम जानहे हैं कि इस सिद्धान्त पर पाश्चात्य पण्डितों के कई दल हैं, पर यह नहीं जानते हैं कि उनके मत भेद का कारण क्या हैं। सरस्वती के सम्पादक ने इस पर जो लेख लिखा है वह विवर्त बादियों के किस दल का सिद्धान्त है यह भी हम नहीं कह सक्ते। जो हो, हमने इस लेख को भली भांति पढ़ा और मनन किया है। हमारे मनन का यह फल हुआ कि पूर्वापर का बिरोध हमारे बिचार मार्ग पर आ खड़ा हो गया और अन्त में हमको यह कहना पड़ा कि "यह विकास सिद्धान्त है या बिनाश सिद्धान्त"? लेख के जिस अवतरण से हमारे मन में इस बिरुद्ध भाव वा बिरुद्ध बिचार का उदय हुआ उसका सारांश नीचे उद्धृत कर हम अपनी शङ्का का स्वरूप स्पष्ट खोल कर बताते हैं:-

अवतरण १ "संसार में जीवन निर्वाह का बड़ा बिकट झंझट जीवों के पीछे लगा हुआ है। जो सबल होने के कारण अपना जीवन अच्छी तरह से निर्वाह कर सक्ते हैं वे ही जीते रहते हैं। शेष नाश को प्राप्त हो जाते हैं। देश और काल की व्यवस्था के अनुसार जीवों को अनेक प्रतिकूल बातों का सामना करना पड़ता है। उनसे वे ही पार पा सकते हैं। जो अधिक सबल और उनके सहने की अधिक शक्ति रखते हैं। निर्बल का कहीं ठिकाना नही। स्वयं प्रकृति भी जो सबल और निर्बल दोनों को पैदा करती है, निर्बल का पक्ष न लेकर सबल का ही लेती है अतएव सिद्ध है कि संसार में निर्बल का गुज़ारा नहीं। इससे मनुष्य को सबल बनने का प्रयत्न करना चाहिये"॥

ऊपर के वाक्यों पर खूब मनोनिवेश करना चाहिये। यह द्विवेदी जी का स्वतंत्र वा निजका लेख नहीं है-मालूम होता है यह हरवर्ट-स्पेन्सर के ग्रन्थ के आधार पर लिखा गया है और अनेक प्रकार से प्रमाण पर प्रमाण और दृष्टान्त पर दृष्टान्त उपस्थापित करके अन्त में यह सिद्ध किया गया कि "संसार में निर्बल का गुज़ारा नहीं। इससे मनुष्य को सबल होने का प्रयत्न करना चाहिये"। जड़ प्रकृति का आधार लेकर मानवी प्रकृति की इति कर्त्तव्यता स्वीकार कराने में क्या लेख का यह आशय है कि इस सिद्धान्त पर बिचार करने वालों को दृश्य और अदृश्य प्रकृतियों के कृत्य कलाप का वा उनके धर्म भिन्नता के विषय का बिचार एक दम छोड़ देना चाहिये? जब ऐसा है तो यहां भी उस पर बिचार न किया जावेगा। सिर्फ उक्त लेख की प्रसिद्ध बात पर बिचार किया जाता है। अस्तु "संसार में निर्बल का गुज़ारा नहीं सबल का ही गुज़ारा है"। यहां क्रम बिकास का सिद्धान्त भिड़ाने से यही जाना जाता है कि इस सिद्धान्त की अन्तिम सीमा Last stage मनुष्य का "सबल" होना है क्योंकि "सबल" होने पर वह जीवित रहेगा, मरेगा नहीं। "सबल" बनना, और अमर होना एक है। यहां "सबतला" का अर्थ ही हमको जानना है। थोड़ी देर के लिये हम पशुओं की प्रकृति का विचार यहां उपस्थित करते हैं। पशु जाति में वा पशुओं में सिंह वा व्याघ्र सबसे "सबल" जन्तु है। तो क्या यह मानना भड़ेगा कि वे इस संसार में सदा जीवित रहेंगे? किसी शास्त्रज्ञ का कथन है कि ऐसे जीवों की संख्या दिन प्रति दिन कम होती जाती है। जब यह सत्य है तब "सबलता" का क्या अर्थ हुआ? और भी जो हम अपने जीवन का निर्वाह अच्छी तरह करने ही के प्रयोजन से इस उत्तम मनुष्य तन में आये हुये हैं तो कहना पड़ेगा कि मनुष्य के समान स्वार्थ पर आत्मम्भरि दूसरा कोई प्राणी नहीं है। जहां स्वार्थ भरा है वहां बिरुद्धाचरण का प्रचण्ड भाव अवश्य रहता है। शत्रुता

की उत्पत्ति आपसेआप होती है। इस से यदि "अपने" जीवन का निर्वाह अच्छी तरह करने के लिये हमको "सबल" बनने का प्रयत्न करना चाहिये तो इस सबलता का अर्थ "जिसकी लाठी उसकी भैंस" वा Might is right होगा। जिससे मनुष्य जाति का इस संसार में एक क्षण भर भी जीवित रहना कठिन हो जायगा। लोगों के स्वार्थ उन्हें एक दूसरे पर हस्तोत्तोलन करने में बाध्य करेंगे। रावण सिकन्दर नेपोलियन महमूद आदि उपद्रवी शस्त्र के बल विजयी बनने वाले इसी अर्थ के मानने वाले हुये। जिस जाति में ये हुये उसकी इस समय क्या दशा है। भारत विजयी मुसलमानों का सिंहासन इस वक्त अपनी पीठ पर किसको आसन दे रहा है। यह सुविज्ञ पाठकों को अच्छी तरह विदित होगा। अतएव हम कह सकते हैं कि यदि "सबल" का यही अर्थ है तो यह "बिकास सिद्धान्त" नहीं बिनाश सिद्धान्त है और इससे परोपकार दया, धैर्य्य, सहिष्णुता, स्वार्थ आदि गुणों पर कुल्हाड़ी चल रही है। क्या "सरस्वती" के प्रवीण सम्पादक इस अर्थ को मानते हैं?

जहां तक हमको स्मरण हो रहा है Survival of the fittest का अनुवाद "जो सबल है वही संसार में जीता है" किया गया है Fittest का अर्थ सबल न हो कर योग्यतम होना चाहिये था। और ऐसा अर्थ करके यह बतलाना था कि योग्यतम बनने के लिये मनुष्य को किसका आश्रय लेना आवश्यक है। योग्यता किससे आती है? योग्यता शारीरिक शक्ति है या मानसिक? इन दोनों शक्तियों में अधिक श्रेष्ठ कौन सी है? किसके आधार में कौन है? इत्यादि। ऐसा न होने से शङ्का का स्थान भर पूर दिखाई देता है। संसार में निर्बल का कहीं गुज़ारा नहीं इसका खंडन हम नहीं करते हैं। संग्राम में विजयी होने के लिये शक्ति विशेष की बड़ी भारी आवश्यकता है। पर यह मालूम होना चाहिये कि वह शक्ति कौन सी शक्ति है। हमारे आर्ष ग्रंथ भी आरम्भकाल से पुकार रहे हैं "नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः" पर इसे कौन सुनता है? यहां पर यह कह देना हमको उचित जान

पड़ता है कि आधुनिक विवर्त बादियों का जीवन और हमारे पूर्व तन विवर्त्त बादियों का आत्मा दोनों बिचारणीय हैं। स्वार्थ और परमार्थ में यदि अंतर माना जावे तो इस में भी अंतर देखा जावेगा। हम लोग क्रम बिकास सिद्धान्त के रथ पर बैठे पूर्णता की ओर चले जा रहे हैं। सबलता की ओर नहीं जो सबलता पूर्णता का एक प्रधान अंग है। जो जितना पूर्ण होगा वह उतना ही योग्य और श्रेष्ठ कहा जायगा। यह सबलता यदि दृश्य संसार से सम्बन्ध रखे तो पूर्णता दृश्य और अदृश्य दोनों से सम्बन्ध रखने वाली कही जावेगी। संग्राम भूमि का जो बिजयी बीर होगा वही पूर्ण बीर कहा जावैगा और वही सदा जीवित रहेगा। यही मनुष्य का पूर्ण बिकाश वा बिकाश सिद्धान्त का अन्तिम स्थान है। जिसे हम यों समझ सकते हैं कि जो पुण्यात्मा है वही योग्य बलिष्ट और श्रेष्ठ है। पूर्णता धर्माचरण से प्राप्त होती है। इससे जो धार्मिक है वही पूर्ण है। यहां हमारा परमप्रिय सिद्धान्त स्वतः सिद्ध हो रहा है कि "यतोधर्मस्ततोजयः"।

अनन्तराम पांडे रायगढ़

सामयिक वर्ताव की कुण्डलिया माधवप्रसाद शुक्ल रचित॥

१

हिन्दीतजि इङ्गलिस पढ़ो बोलो गिट् पिट् बैन।
अपनी पदवी छोड़कर वनिये जेंटिल मैन॥
बनिये जेंटिल मैन कोट अरू पैंट चढ़ाओ।
चश्मा नैन लगाय हैट शिर मांहि जमाओ॥
दम् दम् सिगरट् पियो पहिन डासन का खट् पट्।
कुत्ता संग मे लिये चलो मारग मे झट् पट्॥

२

धर्म कर्म की बात पर कबहुं न कर विश्वास।
संस्कृत विद् पण्डितन पर करिये घृणा प्रकास॥

करिये घृणा प्रकास वेद मे त्रुटि दिखलाओ ।
बड़े बड़े पटु बुद्धि सुजन झूठा ठहराओ ॥
निन्दा करना सिखो आपनी हठ मत छोड़ो ।
संयम नियम बिचार आदि को जड़ से तोड़ो ॥ २ ॥

३

भीष्मादिक की कथा पर अचरज करो महान् ।
जो दिमाग मे नहि धसै ताहि झूठ कर जान ॥
ताहि झूठ करि जान महाकायर बनजाओ ।
वृटिश जाति सम नहीं कोऊ यह मन में लाओ ॥
कहुं बीरन की सुनो बात तो डर के मारे ।
चुप ह्वो घर में रहो सोय कहुं पांव पसारे ॥ २ ॥

४

मिथ्या भाषण कुटिलता छल कुकर्म अभिमान ।
द्रोह ईर्षा जाति मद करै सो पण्डित जान ॥
करै सो पंडित जान प्रात उठि तिलक जमावै ।
नारिन के बिच बैठ जगत मिथ्या समझावै ॥
बात बात पर पाप पराछित सहित बतावै ।
महा अधम नीचनहू के घर जाय पुजावै ।

भा जे अब नहिं बनै अहो ! भारत प्रवीर गन ।
र हो गहे दृढ़ शस्त्र सुमिरि निज धर्म सनातन ॥
त रह तरह के अस्त्र यदपि तुव हृदय कपावत ।
की रति धन मरजाद मान जन प्रेम नसावत ॥
वर ष वर्ष अगणित मनुष्य बनि ग्रास काल के ।
त न पिंजर के ते लखात ह्वै बश अकाल के ॥

मा नव अपने धर्म तजत बनि मूर्ख अपौरुष ।
न हि स्वदेश अनुराग बिचारहिं ते अस दुर्मुख ॥
द शा यदपि अति गलित तदपि हे युव शिक्षित गन ।
शा न्त चित्त निःशङ्क स्वदेशी करहु प्रचारन ॥
उन्निस कबहुं न होइहै जो दृढ़ धर्म निवाहिहौ ।
तिरसठ के अंत्यार्थ को अद्भुत दृश्य दिखाइ हौ ॥

माधव प्रसाद शुक्ल

—०—

बड़े दिन की डाली ।

कलि विश्वरूप दर्शन ।

यह कहां किसको खबर थी कि आज ही बड़ा दिन है और यह अपना प्रभाव जमावैगा । इसी से यार लोग भी मस्त भये अपनी प्यारी अलभ्य निद्रा देवी के गोद में मज़े से कल्लोल कर रहे थे कि तड़का होते ही दना दन की आवाज़ से शरीर कांप उठा और निद्रा देवी ने अपने पर कोई बिपत आती जान मुझे अपनी गोद से अलग किया फिर तो वह उक्त सुख कोसों दूर हुआ-चिन्ता के Regiment ने अपने पूरे सामान से मेरे चित्त में डेरा डाल ही तो दिया और एक के बाद दूसरी चिन्ता क्रम २ से अपना प्रभाव जमाने लगी । सोचने लगा मेरा शरीर कांपा तो क्यों कांपा ? और यह शब्द क्यों हुआ ? क्या बङ्गाल का कम्प छूत की बिमारी सा मुझे तो नहीं हुआ ? आज कल बङ्गाल में कितने तरह के कम्प Camp हैं । राज कम्प, भूमि कम्प, दैव कम्प, प्लेग कम्प, पुलिस कम्प, कांग्रेस कम्प आदि कम्प से मेरा शरीर भी एक चिन्ता का Camp हो गया । पुलिस वालों ने बन्दे मातरम् के कहने वालों पर कोई कानूनी तोप तो नहीं धर धमका कि जिस शब्द से मेरा

शरीर कांप गया। क्योंकि Armsact के बाद एक छोटी सी छूरी के भी दर्शन न हुये तो तोप की आवाज़ से शरीर कांप जाना कोई असम्भव नहीं है। जो हो गुरू महाराज के बिना कैसे शङ्का निवारण हो सकती है। चलो उन्हीं के पास चलैं फिर क्या था अपने महामान्य सदा के साथी पञ्च गुरू के यहां पहुंचे। देखा तो पञ्च गुरू Dunce cap दिये बुकर डाढ़ी लगाये अबा काबा डांटे दोनों हाथ दोनों जेब में डाले बक ध्यान लगाये टहल रहे हैं–हमको अलकाब बजा लाने का भी मौका न मिला कि आप फरमाने लगे। देखो कब से तुम्हारी राह देख रहे हैं और गधे के सर से सींग समान नदारद तुम इधर उधर घूम रहे हो तुम्हारा कहीं पता ही नहीं। मेरे पर आज इतनी कृपा होने का क्या कारण है? खैरीयत तो है? आज बड़े दिन के उत्सव में न चलोगे।

यह कह पञ्च महाराज बढ़े हम भी कठ पुतली के तरह उन्हीं के कदमों पर कदम रखते हुये बढ़े और कलकत्ते के St. Paul के गिरजे में जा पधारे। आहा! उसकी सजावट देखते ही कालिदास भवभूति रेनल्ड बङ्किम आदि की याद आने लगी। कि नाहक अपने बर्णन का मसाला जो इस सजावट से बहुत कुछ मिल सकता है बिना लिये ही चले गये। क्या कहैं यदि सजावट के वर्णन के लिये कहीं से भी कवित्व शक्ति की बुद्धि उधार मिलती होती तो बन्दा क्यों चूकता। तो "सजावट" ऐसा शब्द लिख देना ही पूरे वर्णन की इति समझिये। और नहीं तो ज़रा धीरज धरिये पुनर्जन्म के अनुसार इनके अवतार की प्रतीक्षा करिये और यदि इतना भी सबर न हो तो इस सजावट के न देखने से अपने भाग्यों को ठोंक धिक्कारिये। खैर वहां पहुंच दल बादल के समान काले २ कोट पहने गौराङ्ग महा प्रभुओं को देखा मानों काले २ मेघों में उनका मुख मण्डल बिजली समान चमकता हो। ज्यों ही हम गुरू चेला वहां पहुंचे कि सब के सब पञ्चजी पर टूट ही तो पड़े। मैं बड़ा चकित हुआ कि ऐं! मामला क्या है? क्या हम दोनों को स्वदेशी Agitator समझ

कर वारण्ट की हुलिया मिलाय गिरफ़ार करने के लिये तो हम पर नहीं टूटे। यह हम मन में कही रहे थे कि उन्हीं में से एक गौराङ्ग महा प्रभु ने अपने श्री मुख से देववाणी में कहा "This grand Presidental seat is reserved for such a worthy man like you from a long time, तब तो मेरे जी में जी आया पञ्च महाराज सजी सजाई कुर्सी पर जा बिराजे और मुझे भी उन्हीं के बगल में Assistant कथक्कड़ की कुर्सी नसीब हुई। अस्तु पञ्च महाराज के बैठते ही इतनी तालियां पिटीं कि लोगों के कान के पर्दे फट गये। इस बात की सत्यता इसी से मालूम हो सकती है कि कदाचित इसके पहिले लोगों के कान में छेद न था और उस पर्दा के फटने ही से सबों के कान में छेद सा मालूम होता है—तदनन्तर पञ्च महाराज बोले "तुम सब कलिराज के अनन्य भक्तों को धन्य है बताओ आज किस प्रसंग को छेड़ें" इतनी बात सुन उनमें के एक लीडर अपने श्री मुख से यह उच्चारण करते भये "आप के हम अति कृतज्ञ हैं कि समय २ पर आप हमारे इष्ट देव की बिचित्र २ बातें बताया करते हैं। आज भी ऐसे ही कोई उनके बिचित्र रूप को बिस्तार या सूक्ष्म रूप से वर्णन करिये"। इतनी बात के सुनते ही हमारे पञ्च महाराज का कन्दरा सा मुंह New invented. Machine. के समान जुंबिश करने लगा।

सावधान ह्वै सचेत सब, सुनहु श्रोत गण आज।
बरनत हैां जिन कर चरित सो धन्य २ कलिराज॥

सो सावधान होकर सम्पूर्ण जो जेण्टिलमेनों के समूह हो मेरी बिचित्र कथा को श्रवण करिये मैं परिश्रम पूर्वक कलिराज के बिचित्र रूप की बर्णन करता हूं। एक समय की बात है कि अरराट पहाड़ पर कलिराज के एक भक्त ने इनके बिचित्र कर्मों पर आश्चर्य कर इनके रूप के दर्शनार्थ धरना दिया। और बरसों केवल Huntley Calmer की बिस्कुट और Co-operative society का Lemonade और soda water ही खा पीकर तपस्या करते रहे पर भगवान् कलिराज न पसीजे। फिर इन सब

चीज़ों के साथ अनन्य भक्त जी ने Extra. No. 1 और बढ़ा दिया फिर भी दर्शन न हुआ। तब तो वो दृढ़ चित्त Kilner's Hotel के कुल सामान से अपनी आत्मा को सन्तुष्ट करने लगा। आत्मा के सन्तुष्ट होते ही कलि भगवान् का कलेजा पसीज कर पानी २ हो गया और झखमार दर्शन देना ही पड़ा-भगवान् कलि साक्षात् रूप से इनके सन्मुख आ बोले "हम तुम पर अति प्रसन्न हैं बताओ जो कहो सो करें" तब तो भक्त जी ने कहा तुम्हारे बिचित्र कर्म्मों को देख आप के विचित्र बिश्वरूप के दर्शन की इच्छा रखता हूं। सो मेरी अभिलाषा को पूर्ण करिये...

इतनी बात के सुनते ही भगवान् कलिराज ने अपने बिचित्र विश्व रूप को दिखलाना आरम्भ किया !...

महाराज कलि भगवान् के जो चरण हैं सो India या Indians हैं क्योंकि सब इसे अपने पैर की धूल समझते हैं और गौराङ्ग प्रभुओं की लात सहते सहते इसका स्वरूप चरण रूप में परिवर्त्तित हो गया। इसी से यह सबों की लात सहने में समर्थ है। दोनों जंघायें इसकी एशिया खण्ड है, दोनों ऊरू उत्तरी या दखिनी अमेरिका हैं। जघन देश योरप खंड है, नाभी गौराङ्ग राज्य के हस्त गत समस्त देश हैं, बक्षस्थल वृटिश राज्य के समस्त देश हैं। मुख इङ्गलैंड और मस्तिष्क या शिरोभाग लण्डन है। योरप के लोग जिनकी देवताओं में गिनती है वे सब इनकी भुजायें हैं क्योंकि इन्हीं के ज़रिये कलि भगवान् जिसको जो चाहैं स्याह का सुफेद करें और सुफेद को स्याह कर सकते हैं। हर एक तरह की Petitions अर्ज़ियां आप के कर्ण हैं इनके कान तक कोई बात के पहुंचाने का केवल यही एक तरीका है उसको भी चाहैं जैसा सुनी वा अनसुनी कर सकते हैं। पायोनियर, इङ्गलिशमैन आदि अङ्गरेज़ी पत्र आप के नेत्र हैं जो बातें ये लिख देंगे बस उसी को तो देखेंगे देशी पत्रों की बात देखते हुये भी नेत्र हीन हो जाते हैं। हाकिमों की हिन्दुस्तानियों पर बद नज़र आप की कुटिल भोंहैं हैं। ईश्वर न करै किसी देशी पर इनकी नज़र बद हो या किसी को ये तक लें India के

बारे में Parliament आप की पलकें हैं। जिसके पलक भांजते ही हिन्दुस्तान के बिगड़ने वा बनने का दार मदार रहता है-हर एक तरह के पेय द्रव्य आपकी रसनेन्द्रिय है; पीनल कोड की दफा आप के वेद या ब्रह्म वाक्य हैं; पुलिस कान्स्टेबलों के मोटे २ सोंटे आप के यमराज सदृश दांत हैं, लाल पगड़ी को देखते ही हिन्दुस्तानी मात्र के लिये मानों मौत का पैगाम आ जाता है। इङ्गलिश लेडीज़ आप की मोहनी माया हैं। हर एक तरह के ईजाद आप की सृष्टि हैं हिन्दुस्तान का रस हर तरह चूसना आप के अधर हैं। राली ब्रादर्स उनकी कुक्षि (कोख) या बड़वानल समान पेट है। रक्त मांस रहित भारत का अस्थि पञ्जर मात्र का ढचर आप की हड्डियां हैं। काल की कुटिल गति से भारत का बनना या बिगड़ना कलि भगवान् का श्वास प्रश्वास है। सम्पूर्ण स्टीम मैंशीन के धुयें आप के बाल हैं; बृटिश वार्न सब्जेक्ट आप के हृदय हैं। विलायत की पार्लियामेंट उनका मन है; और हे भक्तजन पण्डितों ने बृटिश पालिसी को कलिराज का अहङ्कार तत्व बतलाया है। बीसवीं शताब्दी के समस्त अस्त्र शस्त्र आपके नख हैं। सम्पूर्ण विलायती Industries कारीगरी आप की निपुणाई है। फोनोग्राफ ग्रामोफोन, पियानों आदि आप के स्वर हैं। अब कलिराज के बिराट रूप के बर्णन का अन्त करते हैं, किचनर के मातहत में समस्त मिलीटरी सिपाही आप की भुजायें हैं। विलायती बड़े २ सौदागर आप के ऊरू हैं और काले मात्र आप के चरण हैं।

इतनी कथा सुनाय श्री पञ्च जी महाराज बोले कि हे जेण्टिलमैन गण जिस समय भगवान् कलिराज ने अपने इस बिराट रूप को दिखलाया तो वह भक्त देख बड़ा ही चकित हुआ यहां तक उसमें सामर्थ्य न रही कि वह कलि भगवान् का अनन्य भक्त कलि जी की स्तुतितो करता। वह रूप देख कर हक्का बक्का सा रह गया और कहा बस महाराज! आप अपने इस रूप का लीला बिस्तार करिये। उस भक्त के मुख से यह बात निकलतेही कलिभगवान् ने अपने उस रूप को समेटा

और एक मामूली रूप धारण कर बोले कि हम तुम से अति प्रसन्न हैं जब तब हम तुम्हें अपना रूप दिखलाया करेंगे और अब से हम तुमको समस्त परोक्ष ज्ञान की गठरी सौंपे देते हैं जिससे तुमको अतीन्द्रियज्ञान की कमी न रहेगी यह कह कलि महाराज अन्तर्ध्यान हो गये-

तदनन्तर पंच महाराज की कथा के समाप्त होते ही चारो तरफ से हुटहुट हुर्रे के शब्द से वह गिर्जा घर गूंज उठा और सब लोग जिससे जो कुछ बना अपनी २ ज़बानी जमा खर्च पतलून के पाकेट से निकाल निकाल चढ़ाने लगे-इसके बाद एक सच्चे देश भक्त जो मारवाड़ी के शकल का था आया और बड़ी भक्ति से हाथ जोड़ एक गठरी चढ़ा कर बोला "मोंकू तो और कछू दैवै की सामर्थि नहीं है तौ पर भी स्वदेशी और वायकाट की या गठरी चढ़ाये देता हौं। महाराज याके मारे मेरो नाक में दम आय लगो है सो आप विद्वान हैं ऐसा करिये जामे या सड़ की सूरत न देखवे को मिले न नाम ही लेना पड़े" इसके बाद सब जहां के तहां तितर बितर हो गये वन्दा भी खुश नसीब वहां से अपना हिसस्सा लें रवाना हुआ और गठरी का बोझ लाकर घर में पटक ही तो दिया। वस मेरे सब कच्चे बच्चे उस गठरी से लिपट गये और सब चीज़ों को छोड़ स्वदेशी और बाय कट लगे ले ले भागने। यहां तक की दूसरों के लिये कुछ भी न छोड़ा। पाठक! इस प्रान्त में लोग जो इस भट्टी चीज़ का नाम नहीं लेते सो यही कारण है कि इस प्रान्त में यह दूसरों के हिस्से में पड़ी ही नहीं। यह वृत्तान्त किसी पत्र में देना ही चाहिये सो दे दिया गया। आप लोग भी इसे पढ़ कुछ लाभ ही उठा लेंगे। महादेव भट्ट।

लोकोक्ति

पं०-सिद्धेश्वर लिखित इसमें कहावतों का संग्रह किया गया है जो कहावतें हमारी प्रति दिन की बोल चाल मे आती हैं-पुस्तक

बड़े काम की है संग्रह करने योग्य है मिलने का पता वी एम एगड-सन् नील कगठ बनारस

कविरत्नाकर

कार्त्तिक प्रसाद खत्री लिखित संस्कृत के चुने ऐसे श्लोकों का संग्रह जिनका एक टुकड़ा या आधा बहुधा हमारी बोल चाल में कहा जाता है संग्रह बड़ा उत्तम है मूल्य ।) पता वीऐम ऐगड सन नील कगठ–
बनारस

महाकबि अमर चन्द्र सूरि

ये कवि सार्वभौम, कबिराज अमर सिंह के शिष्य हैं. । काव्य कल्पलता, छन्दो रत्नावली, मुक्तावली, बाल भारत आदि ग्रंथ इनके बनाये हुये हैं । इनकी कविता बड़ी सरस और सालङ्कार है । बाल भारत काशी विद्या सुधानिधि और काव्य माला में छप चुका है । सम्पादक काव्य माला ने उक्त कवि का समय १३वीं शताब्दीं में निश्चित किया है । यह प्रसिद्ध है कि "दगिडननः पदलालित्यम्" पर अमर चन्द्र की पदावली का लालित्य, किसी कवि से कम नहीं है । लिखा भी है । लालित्यम मरस्येह श्रीहर्षस्येह वक्रिमा । नयचन्द्रकवेः काव्येदृष्टं लोकोत्तरं द्वयम् । जैसे रघुवंशादि काव्य सटीक मिलते हैं, वैसे बाल भारत के ऊपर कोई टीका वा टिप्पणी उपलब्ध नहीं होती । काव्य माला के सम्पादकादिकों ने भी संक्षिप्त और बिषम स्थलों में विस्तृत टिप्पणी देने का कष्ट नही उठाया । यदि उन्होंने इसे रघुरपि काव्यं तदपि च पाठ्यम् की तरह समझा है तो भूल की है । यदि मल्लिनाथ समझते कि 'रघुवंश' सरल है उसकी टीका की आवश्यकता नहीं' तो उनकी स्वच्छ टीका का दर्शन कैसे होता । किसी किसी इसके श्लोक को अच्छे पण्डित को भी सावधान होकर लगाना पड़ता है-उक्त कविकी रस भरी कविता का भारतचम्पू निदर्शन है- भीमसेन शर्म्मा गुरुकुल कांगड़ी

REGISTERED No. A—308.

हिन्दी प्रदीप

शुभ सरस देश सनेह पूरित प्रगट है आनन्द भरै ।
बचि दुसह दुरजन वायुसों मणिदीप सम थिर नहिं टरै ॥
सूझै विवेक विचार उन्नति कुमति सब यामें जरै ।
हिन्दी प्रदीप प्रकाशि मूरखतादि भारत तम हरै ॥

फरवरी १९०७

मासिक पत्र

जि० २९ सं० २

सम्पादक और प्रकाशक पंडित बालकृष्ण भट्ट प्रयाग

विषय सूची

सभायें पुस्तकालय और विद्यार्थियों तथा असमर्थों से अग्रिम १॥=)
समर्थों से ३।=) पिछले अङ्कों की पूरी जिल्द फी जिल्द मै पोस्टेज २)

यूनियन प्रेस इलाहाबाद में मुद्रित हुआ

—:००:—

जि० २६ } प्रयाग { फरवरी
सं० २ } { सन् १९०७ ई०

भारत का दिवाला

हमारे सेठ साहूकारों में दिवालियों का क्रम है कि टाट उलट दिवाला निकाल इतनी पूंजी पास रख लेते हैं कि सेठ जी जन्म पर्यन्त नित्य मलाई चखते तोंद पर हाथ फेरते बैठे रहते हैं-देने पावने से कुछ प्रयोजन न रख मुक्तजन समान लेन देन की अनेक झंझट रूप भव जाल से छुटकारा पा जाते हैं-अङ्गरेज़ी शासन की बड़ी मेशीन के द्वारा इण्डिया-गवर्नमेंगट के नाम से कई अरब का कर्ज़दार यह भारत मामूली दिवाल-दारियों के समान झंझटों से मुक्त नहीं है बरन् उत्तमर्ण की भांत बाहर के लोग इसे अपना "अधमर्ण" कर्ज़दार बनाये सबी इसकी मास नोचे

लेते हैं दिवालदारिये के दिवाले की रकम जहां से जो पाता है खींचे लेता है बल्कि यों कहें कि भूमण्डल में कौन सा ऐसा देश है जो भारत के दिवाले से इस समय फाइदा नहीं उठा रहा है-वरन काटछाट कर चपत मारते हुये सबी इसे लूट रहे हैं-कोई समय था कि बाहर के सौदागर यहां आय चीज़ें यहां की ले जाते थे और लाभ उठाते थे, प्रति वर्ष विदेश का असंख्य धन यहीं रह जाता था और यहां का अटूट धन चुकाये नहीं चुकता था-Steam और Electricity का आविष्कार तब तक नहीं हुआ था-भाफ और बिजली की शक्तियों का गुण-किसी को मालूम नहीं हुआ था-केवल हाथ की बनी कारीगरी की चाह लोगों में फैली हुई थी-उस समय यहां के उत्तमोत्तम शाल रेशमी वस्त्र और महीन से महीन कपड़े पृथ्वी भर का धन खींचे लेते थे-यहां की unadulterated खालिस पैदावार संसार भर में फैली हुई थी-भाफ और बिजली की ताकत भरपूर काम में लाई जाती तौभी हमारी ऐसी बड़ी हानि न थी जो शुद्ध पैदावार से चीजें तैयार की जातीं-विदेश की बनी चीज़ों में ऐसी ही कोई रहती है जिनमें दूसरी चीज़ों का मेल न किया जाय और ऐसी ऐसी घृणित अपवित्र वस्तु चर्बी लहू मांस आदि का मेल किया जाता है जिनके छूने और नाम लेने से ओकलाई आती है घिन पैदा होती है तो उन्हें बर्तने की कौन कहे-पर सब ओर से कसे हुये इस दिवालिये भारत को सस्ता और चमक दमक देख विदेशी वस्तुओं को लेना ही पड़ता है-धन रहा नहीं प्रति दिन छीण होता जाता है जीवनोपयोगी पदार्थों का उपयोग करना ही पड़ता है तब हाथ की बनी महंगी भद्दी और खुरखुरी चीज़ों को ऐसे ही कोई काममे ला सक्ते हैं जिन्हे देश की तरक्की का खब्त या Mania हो गया है सर्व साधारण निर्द्धन प्रजा उसे काम में नहीं ला सक्ती-पहनने ओढ़ने तथा ज़ेबाइशों की चीज़ों को छोड़ देते हैं किन्तु खाद्य पदार्थ जिनका रस खिच शरीर का हाड़ मास और रुधिर बनता है जैसा चीनी नोन घी इत्यादि जब अपवित्र हुये तो उसका

क्या परिणाम होगा यही कि शरीर में अनेक रोग पैदा हों; लोग अल्पायु हुआ करें; बुद्धि तामसी हो कर भले काम की ओर झुकावट न रहे; आलस्य निद्रा क्रोध द्रोह इत्यादि बढ़ें-यह इसी का परिणाम है कि इस समय बहुत लोग देश के उद्धार का यत्न कर रहे हैं किन्तु उनका आहार बिहार तामसी हो जाने से कृत कार्य नहीं होते-कोई न कोई ऐसा अड़चन पड़ जाता है कि आपस में सबों का सह मत नहीं होता-अस्तु और सब छोड़ हम पहले चीनी को लेते हैं-सन् १८३६ तक प्रति वर्ष दो करोड़ की चीनी यहां से और और देशों में जाया करती थी-इस समय साढ़े सात करोड़ की चीनी जो हड्डी और बैल के लहू से साफ की जाती है प्रति वर्ष बाहर से यहां आती है-तो दो करोड़ वह जो चीनी के क्रय-विक्रय से यहां आता था और साढ़े सात यह हर साल साढ़े नौ करोड़ रुपया केवल विदेशी चीनी के द्वारा यहां का निकल जाता है-बरेली इत्यादि शहरों में सब मिलाय कई सौ खण्डसाल यहां थी-सो अब सिर्फ १८ या १५ खण्डसाल बची हैं सो भी रोज़ रोज़ घटती जा रही है-गाज़ीपूर में बड़ी भारी चीनी की मण्डी थी सो अब बिल्कुल टूट गई-यही हाल रहा तो मालूम होता है कि कुछ दिनो में ऊख की खेती बिल्कुल बन्द हो जायगी-मोरिशस की धरती चीनी के लिये यहां से अधिक उर्बरा है यह कभी न माना जायगा-आदि काल से चीनी का उत्पत्ति स्थान यही देश है-संस्कृत शर्करा से शक्कर हुआ उससे अङ्गरेज़ी सुगर Sugur बना-इसाइयों की धर्म पुस्तक पुरानी इञ्जील में भी सर्करा का इशारा पाया जाता है जिस्में इस भांत लिखा है Sweet culamns probably a Species of Sugur yielding cane "स्वीट क्यलमस" जो शायद कोई किस्म शक्कर पैदा करने वाले सरकिण्डे की है-हिराडटस यूनान का एक प्रसिद्ध विद्वान् इसे Manufactured honcy बनाया हुआ शहद अपने लेखों में लिख गया है-चीन वालों ने पहले पहल शर्करा क्या वस्तु है यहीं२ से जाना-प्लाइनी आदि कई विद्वानों की राय है कि शक्कर के पैदाइश की जगह हिन्दुस्तान ही है-अफसोस है जो चीनी के पैदाइश की जगह है वहां से कुछ दिनों में इसकी खेती जाया चाहती है...एक चीनी

हो पर क्या बिलाइत की बनी कौन सी वस्तु है जो unadalterated खालिस है जिस्में मेल नहीं रहता—

बिलाइत के लोग जो खालिस या विना मिलावट के चीजें तैयार करैं तो इतनी सस्ती न बेच सकैं—जैसा कपूर में चर्बी सी किसी चीज़ का मेल रहता है ऐसा ही केसर का भी हाल है; ऊनी कपड़े शुद्ध ऊन के बने बहुत कम होते हैं हमारे यहां के लोग विलाइती ऊनी कपड़ों को आचार की लिखावट से "ऊर्णा वातेन शुध्यति" समझ ऊन वस्त्र को शुद्ध मान पूजा पाठ और खाने पीने के समय पहना करते हैं-पर निश्चय रहे ऐसे बहुत कम कपड़े हैं जो शुद्ध या खालिस रेशम या ऊन के बने हों और सस्ते भी हों-जब रूई के कपड़ों में बिलाइत के मिल चलाने वाले न जानिये क्या२ मिला देते हैं तब रेशम और ऊन को कौन कहे-यहां की मिलों में तैयार किये कपड़े जो ज़ियादह पायदार और टिकाऊ हुआ करते हैं उसका यही कारण है कि यहां वाले अभी तक अपना माल unadalterated विना किसी दूसरी चीज़ मिलाये तैयार करते हैं-इसी से देशी माल सस्ता नहीं पड़ता और वैसी चमक दमक भी नही रहती तब क्यों कोई उसे खरीदे-हिन्दुस्थान के इस दिवाले का असर यहां के वाणिज्य पर भरपूर पड़ रहा है—स्वच्छन्द व्यापार Free trade की पालिसी इस दिवाले पर घाव में नोन का छिरकना सदृश हो रही है—जहां से कच्चा बाना Raw metirials जाता है या जो देश कृषि प्रधान है ज़मीन की पैदावार जहां की समृद्धि का हेतु है वह देश कभी नहीं उन देशों के साथ होड़ Comfrete कर सकेगा जहां कच्चे बाने को साफकर चीजें तैयार की जाती हैं इसी से इस समय की विदेशी गवर्नमेंट "फ्रीट्रेड" कायम किये है-विदेशियों को हम स्वदेशियों पर सहानुभूति होती तो हम यह क्यों कहते कि भारत दिवा-लिया है और न कोई आशा है कि उनको हमारे साथ जैसा चाहिये वैसी हमदरदी कभी आवेगी-हम इस समय स्वदेशी और बायकाट के लिये सिर मार रहे हैं जब यह मालूम होगा कि ये लोग इस्में कुछ कृत कार्य हो चले हैं तो कोई ऐसा खोंचा विदेशी लोग मार देंगे कि हमारा सब प्रयत्न व्यर्थ हो जायगा और जैसे के तैसे बने रहेंगे-ऐसा ही इस दिवाले

का असर हमारे धर्म कर्म में भी पड़ा है जिसे फिर दिखावेंगे–

भारत में असन्तोष–

भारत में असन्तोष का सबसे बड़ा कारण उसके लिये है जो राजनीति में कुछ भी ज्ञान रखता है-कौन इसे न मानेगा कि यहां अधिक जन समूह इस समय वेरोज़गार है उसमें भी अधिकतर वेरोज़गार और धनहीन मध्यम श्रेणी वाले हैं-और और देशों में कुलीगीरी का द्वार सब के लिये खुला है और आसान है यहां सो भी नहीं है-यहां ऊचे दरजे के लोग कुलीगीरी करना कभी पसन्द न करेंगे चाहे भूखों मर जांयगे पर और२ देशों में ऐसा नहीं है-संसार में भूख से अधिक कष्टतर और कुछ नहीं है कहा भी है "कष्टात्कष्टतरं क्षुधा" भूखा भूख से पीड़ित हो व्याकुल रहता है उसके चित्त को शान्ति नही मिलती जब तक पेट नहीं भरता-हमारे शासन कर्त्ता इस बात को जानते हैं कि प्रजा में अशान्ति बहुत है और यह भी जानते हैं कि क्षुधा इस अशान्ति का मुख्य कारण है किन्तु जान बूझ कर भी इसे छिपाये हुये हैं और दूसरी२ बात इस्का कारण बतलाते हैं-जैसा कई अङ्गरेज़ी पत्र लोगों के आंख में धूल छोड़ते सिद्ध करते हैं कि प्रजा अङ्गरेज़ी राज्य के अमन चैन में सुख से दिन काट रही है यह थोड़े से पढ़े लिखे लोग हैं जो गुल शोर मचाये हुये हैं कि हम भूखों मर रहे हैं-तो जान लिया गया कि हिन्दुस्तान मे जो असन्तोष और अशान्ति है वह थोड़े से आन्दोलन कर्त्ताओं के आन्दोलन का नतीजा है-यदि वास्तव में प्रजा असन्तुष्ट रहती तो इतना ही आन्दोलन लोगों को उभाड़ने के लिये काफी था–

इसके उत्तर में हम यही कहेंगे कि यह हिन्दुस्तान है इङ्गलैंड नहीं है जहां लोग सदा स्वच्छन्द रहते रहते उभड़े हुये हैं थोड़ा भी आन्दोलन रूई की आग हो जाती है-यहां न जानिये कब से पराधीन और गुलामी में रहते लोगों का जोश बुझ गया है ऐसे शान्त स्वभाव के हैं कि जब तक इनकी नीद तोड़ने का तथा लगा तार इन्हें जगाने और उठाने का प्रयत्न न किया जायगा और चितावनी पर चितावनी इन्हें न दी जायगी

तब तक न उभड़ैंगे-भूखो मर रहे हैं सही पर इतनी हिम्मत नहीं कि चिल्लाय के कहैं कि हम भूखों मरे जाते हैं-नहीं तो क्या गवर्नमेण्ट नही जानती कि रेलीब्रदर्स सरीख इस्के दूत प्रतिवर्ष सब अन्न विलाइत ढोये लिये जाते हैं न कोई व्यवसाय बच रहा तब लोग भूखो मरने या आधा पेट खा दिन काटने के अलावा और क्या कर सकते हैं-तो निश्चय हुआ अशान्ति और असन्तोष मिटाने का एक मात्र उपाय इन्हें भोजन पहुचाना है-प्रजा की इस दरिद्र दशा मे अधिक कर लगाना और टैक्सों के बोझ से उन्हें दबाना निःसन्देह पीड़ा पहुचाना है-इस तरह की पीड़ा सब देशों में स्वतंत्रा का सूत्र पात करने वाली हुई है-मसल है "मरता क्या न करता" फ्रान्स देश के राज्य का उलट पलट Fnench revolution की बुनियाद टैक्स की जियादती और दरिद्रता ही थी…

दरिद्रता का बोझ कम करने के लिये हमे अपने देश की कारीगरी और शिल्प की उन्नति करना चाहिये गवर्नमेण्ट हमारा कुछ नही कर सक्ती यदि हम अपने पैरों से खड़े होना आप सीख लें-इस्के लिये गवर्नमेण्ट का मुख ताकना नितान्त भूल है और यह तभी हो सक्ता है जब यहां के एक२ आदमी अपने ही देश की बनी हुई चीज़ काम में लाने का प्रण करलें-

---

ग्राम में सन्ध्या

अस्ताचल को चले सूर्य भगवान बिलोको पश्चिम को।
किरणैं क्रमशः तिरछी होकर चलने लगीं छोड़ हम को॥
कबूतरों की सुन्दर जोड़ी, यह देखो, उड़ती आती।
इधर उधर कुछ नहीं देखती सीधे दक्षिण को जाती॥ १॥
भले पधारे पारावत! तुम आओ मेरे घर आओ।
थको न उड़तेर ज़्यादा, सांझ हुई अब बिरमाओ॥
खाने को दूंगा मैं तुमको बासमती का ताज़ा भात।
पीने को पानी पोखर का औ सोने को अपनी खाट॥ २॥
मेरे घर की खाट बांस की गुंथी हुई मन भाती है।

जिस पर सोते देर न होती आंख जल्द लग जाती है ॥

घर भी सुथरा सुन्दर सीधा चौकोर नीड़ सा बना हुआ ।
जिसके ढरका एक द्वार में है निकास को लगा हुआ ॥ २ ॥

रवि का जहां प्रकाश दिवस में वृक्षों की घनता होकर ।
बड़ी कठिनता से आता है आंगन से घर के भीतर ॥
शान्त चित्त सब भांति यहां तुम सुख में रात बिताओगे ।
ग्राम्य खगों की मधुर चहक से प्रात जगाये जाओगे ॥ ४ ॥

बात नहीं कुछ सुनते तुमतो एकदम उड़ते जाते हो ।
सच है, घर सबको प्यारा है इसी लिये घबड़ाते हो ॥
भानु देव अब धीरे धीरे अस्ताचल को नियराये ।
पृथ्वी से निज कर समेट कर नभ तरु गिरि ऊपर लाये ॥ ५ ॥

पारावत तो लोप हो गये देखो कौवे जाते हैं ।
उनसे थोड़ा ऊंचे उड़ते घबड़ाये हुये दिखाते हैं ॥
शायद बहुत दूरसे आते और दूरही जावेंगे ।
इसी लिये कहिं प्रिय पदार्थ पर वे न अब आंख जमावेंगे ॥ ६ ॥

मैना तोता भी ये आये बगुले पांत वांध उड़ते ।
उनके लम्बे पांव निहारी बहुत भले मालुम पड़ते ॥
जाओ जाओ तोता मैना बच्चे बाट परखते हैं ।
उनकी जलदी भूख मिटाओ जाओ सूरज छिपते हैं ॥ ७ ॥

देख२ वक पंक्ति नुकीली ग्राम बाल चिल्लाते हैं ।
आपस में बतलाते कहते "मीन खवैये जाते हैं" ॥
अरे कहो तो कहां रहें तुम कहां तुम्हारा बासा है ।
देते जाओ थोड़ा हमको पंख तुम्हारा खासा है ॥ ८

अब देखो यह सूर्य देव का तेजपुञ्ज सब लुप्त हुआ ।
उसे परिधिपट गिरिआंचल से भूभामिनि ने ढाप लिया ॥
पत्ती लगे बसेरा करने कुक्कुट घर में घुसता है ।

गौरैयों की जोड़ी प्रति घर छप्पर में जा छिपती है ॥ ९ ॥
यह देखो गोधन भी लौटा गल घंटा का शब्द हुआ।
सुखद नाद से वर्दराज के वन पर्वत प्रतिध्वनित हुआ ॥
निद्रा भङ्ग भई उल्लू की चमगीदड़ भी उठ डोला।
निशा नई दुलहिन सी मानों अञ्चल से घूंघट खोला ॥ १० ॥
मङ्गल तारा नज़र पड़ा यह देखो कैसा सुन्दर है।
झिलमिल करता तेज बढ़ाता लाल रङ्ग मन हरता है ॥
निशा बधूटी के मस्तक का रोरी का सा विन्दा है।
प्रकृति स्वामिनी ने या भेजा लालटेन पथ दर्शक है ॥ ११ ॥
एक एक करके तारागण दीख पड़े नभ मंडल में।
जैसे श्रमीजनों के श्रमफल क्रम २ से आते कर में ॥
इधर देखिये खेतियर जन भी लौटे घर अङ्ग धो धोकर।
मुख प्रसन्न हथियार लिये सब अपने २ कंधे पर ॥ १२ ॥
सन्ध्योपासन हेतु मिसर जी पुष्करणी को जाते हैं।
बड़े भाग्य जो इस कुकाल में द्विज सन्ध्या कर पाते हैं ॥
पनिहारिन की पांत रुकी अब निर्जन हुईं ग्राम गलियां।
अंधियारा बढ़ता जाता है खुलने लगीं कुमुद कलियां ॥ १३ ॥
ग्रामाधीश देव घर भीतर दीपक जाय जलाता है।
कोई भार्या की सहायता में चूल्हा खुद सुलगाता है ॥
कोई काट रहा है ईंधन कोई बैल खोज करता।
कोई झांझ मृदङ्ग बजाता प्रेम सहित हरि यश गाता ॥ १४ ॥
परम शांत स्वच्छन्द कर्म की भूमि जहां की धरती है।
पुरुषारथ के सुख आसन पर जहां प्रकृति पद धरती है ॥
वहां गोष्ठ में बैठ मवेशी सुख से जब पगुराते हैं।
तब किसान, मिलजुल आपस में पेट की पूजा करते हैं ॥ १६ ।

अनन्तराम पाड़े–रायगढ़

गुणदोष निरूपण

इस बिषय में अपनी संमति प्रकाश करने के पहिले यह बतलाना होगा कि गुण क्या है? और दोष क्या है? और यह गुण दोष हर एक प्राकृतिक पदार्थ और हर एक प्रतिभाशाली पुरुषों के कामों में पाया जाता है--तो आवश्यक हुआ कि बिशेष उदाहरणों से व्यापक नियमों को बनावें और उन नियमों को प्राकृतिक पदार्थ तथा प्रति भावान् पुरुषों के कार्यों में लगावें और उस्के द्वारा गुण तथा दोष को स्थिर करें-गुणदोष निरूपण में यदि यह मान लिया जाय कि गुण का अभाव वही दोष है या दोष का अभाव ही गुण है जैसा देवदत्त सच नहीं बोलता तो सिद्ध हुआ कि झूठ बोलता है तो एक प्रकार गुण तथा दोष क्या है मालूम हो सक्ता है-पर इस वाक्य में कि आम खट्टा है तो यह नहीं सिद्ध होता कि यह आम मीठा ज़रूर है वरन् आम में मिठास का होना जो एक व्यापक या साधारण गुण है सो इस में नहीं है--कभी को ऐसा भी माना जाता है कि गुण का जो प्रतिपच्छी वही दोष है जैसा सच जो गुण है उस्का प्रतिपक्षी झूठ दोष है–

अब इस गुण दोष निरूपण में उचित्त अनुचित का खयाल पहिली बात है जैसा हवशी जाति की कुरूपा कोइला सी काली स्त्री के रूप और सौन्दर्य के वर्णन में कोई कविता करे तो कहिये स्वर्गीया अप्सराओं की रूप माधुरी का वर्णन करना ही व्यर्थ है या नायिका भेद को साहित्य की सीमा के बाहर कर देना चाहिये--अब यहां पर यह निरूपण करना उचित जान पड़ता है किसमें क्या गुण दोष है--जैसा चित्रकारी में बिनहूं वैसी शकल का उतार लेना और चित्र में यथोचित सौन्दर्य का आना गुण है-धुंधलापन आदि उसके दोष हैं-रस परिपाक, स्फूर्ति, भाव व्यंजकता, अनुराग आदि काव्य के गुण हैं--रसाभाश आदि अनेक दोष हैं--ऐसा ही हस्त लाघव आदि शिल्प के गुण हैं-माधुर्य सुस्वरता, ताल और लय का मिला रहना आदि गान विद्या के

गुण हैं--व्याकरण और साहित्य के नियमों से हीन न हो, पढ़ते ही गंभीर भाव मन में पैठता जाय; जिस रस को उठावे अन्त तक उसको निवाहता रहे, प्रौढ़ता, सत्यासत्य विवेक, सप्रमाणता, इत्यादि लेख के गुण हैं--गाली गुफ्ता ओछापन आदि इसके दोष हैं--इस समय के बहुत से नये लेखकों में यह दोष अधिक पाया जाता है--हृदय ग्राहकता स्वमतस्थापन की योग्यता आदि वक्तृता के गुण हैं--इन्हें कला भी कहते हैं-गुण और दोष निकालने की शक्ति यद्यपि मनुष्य मात्र को दी गई है पर सामान्य जन का यह विवेचन प्रमाण Standard में न रक्खा जायगा अपिच जो जिस बात के रसिक अथवा सहृदय हैं उन्हीं का विवेचन प्रमाण में लिया जाता है--गुण दोष निरीक्षण एक ऐसा विषय है कि सब लोग अपनी२ योग्यता के अनुसार करते ही हैं किन्तु सामान्य जन का गुण दोष विवेचन बहुधा एक देशीय अपूर्ण और नियम विरुद्ध होता है-ऐसे लोग यदि किसी के गुण की सराहना करें तो उसे निन्दा मानना चाहिये और उनकी निन्दा को स्तुति-धवलगिरि की चोटी पर जैसा कोहिरा अन्धकार और धुंधलापन की पहुंच नहीं है वैसा ही इन सामान्य जनो की पहुंच गुण गण पूर्ण प्रतिभावान् पुरुषों के गुण तक नहीं हो सक्ती-वहां उन्हीं की पहुंच है जिन्हें शुद्ध स्फटिक के सौन्दर्य और प्रकाश का पूर्ण ज्ञान तथा अनुभव है और वहां ऐसे प्रतिभाशालियों की विवेचना मानों बाल दिनमणि की किरणें इन्द्र धनुष के सात रङ्गों से धवलगिरि को रंजित कर देने वाली होगी--

गुणदोष निरीक्षण में हमने प्रतिभा का कई ठौर प्रयोग किया है तो उचित हुआ कि अपने पाठकों को बतलावें कि प्रतिभा क्या है और प्रतिभावान् की क्या प्रकृति है-प्रतिभा एक विशेष बुद्धि या प्रवृत्ति है जो हमे स्वभावतः प्राप्त होती है--यह स्वाभाविक योग्यता या प्रवृत्ति जो बहुधा श्रेष्ठ मनुष्यों में पाई जाती है इसका पता पाश्चात्य नये विद्वानों में कही नहीं पाया जाता--पाश्चात्त्य वैज्ञानिक केवल इतना ही कह सक्ते

हैं कि यह मनुष्य प्रतिभावान् है-क्यों है ? क्योंकि इसमें कुछ ऐसी असाधारण बात है जो सबों में नहीं होती-ऐसा मालूम होता है कि प्रतिभाशाली मनुष्य के मस्तिष्क की रचना कुछ ऐसी विशेष प्रकार की है जिसका असर उसके कामों में प्रगट होता है-इस पर जो यह उनसे पूछो कि उसके मस्तिष्क की रचना इस प्रकार की क्यों की गई तो वे जबाब देते हैं यह आनुवंशिक है या वंश परंपरा प्राप्त गुण है माता पिता के स्वभाव तथा गुण कर्म अनुरूप सन्तति में भी वेही गुण उतर आते हैं-किन्तु जब किसी प्रतिभाशाली की सन्तान मूर्ख हुई तब वे कहते हैं इसमें वे गुण प्रतिफलित नहीं हुये-क्यों नहीं हुये इसका उत्तर उनके यहां कुछ नहीं है-बस पाश्चात्य वैज्ञानिकों की दौड़ यहीं तक है-हमारे यहां के शास्त्रों में इसकी विशेष छानबीन है प्रतिभा की उत्पत्ति पूर्व संस्कारों के कारण माना है अनेक जन्म के सुकृत का परिपाक प्रतिभा रूप में प्रगट हो उठता है...कविकुल तिलक कालिदास प्रतिभाशाली थे; शेक्सपियर में प्रतिभा थी; आधुनिक बक्ताओं में बर्क्स प्रतिभावान् थे; साम्प्रत .चित्रकारों में रविवर्मा प्रतिभा वाले हुये...इन प्रतिभाशालियों के कार्य कविता हो बक्तृत्व शक्ति हो तथा और कोई बात हो जो सब भांत लासानी या अपनी बराबरी का दूसरा नहीं है सदा चिरस्थायी रहेंगे...तो सिद्ध हुआ कि प्रतिभा एक ऐसी परमोत्कर्ष विधायनी शक्ति है जो मनुष्य के कामों में एक अद्भुत चमत्कार दिखलाती है और इस तरह के प्रतिभा वाले हर एक देश में हर एक जाति और हर एक समय होते आये हैं...जिस देश या जाति की तरक्की होना होता है वहां या उसमें बहुत से प्रतिभा वाले पैदा हो जाते हैं-भाषा के प्रसिद्ध कवि सूर तुलसी विहारी केशव आदि सब प्रतिभा वाले रहे...यह प्र तिभा कवियों में विशेष पाई जाती है वरन् बिना प्रतिभा के कवि होहीगा नहीं-प्रतिभावान् सौन्दर्य या किसी वर्णनीय विषय का निरीक्षण मात्र कर सन्तुष्ट नहीं हो जाता वरन् तत्सदृश सौन्दर्य या वस्तु विशेष पैदा कर

देता है और अपनी वर्णन शैली में उसे इस तरह दिखलाता है जिसे पढ़ लोग लोटपोट हो जाते हैं जैसा कहा है-

"किं कविस्तस्य काव्येन किं काण्डेन धनुष्मतः।
पररुप हृदये लग्नं न घूर्णयति यच्छिरः" ॥

कवि अपनी प्रतिभा से वह बात जान लेत है और देख लेता है; जिसे सूर्य चन्द्रमा भी दिन में और रातमें घूमते हुये नहीं जान सके; जिसे योगी अपने योग बल से नहीं जान सक्ते; कहां तक कहैं सर्वज्ञ सदा शिव जिसे नहीं जानते उसे कवि जान लेता है ॥

जानाते यन्न चन्द्राकौं जानते यन्न योगिनः।
जानीते यन्न भर्गोपि तज्जानाति कविः स्वयम् ॥

प्रतिभाशाली कवि भी एक तरह सृष्टि कर्त्ता कहा जा सक्ता है, समग्र सृष्टि दो प्रकार की है एक नाम में अंगरेज़ी में जिसे अइडियल Idial कहते हैं दूसरी सृष्टि वह जिसका कोई रूप है जिसे हम प्रत्यक्ष देखते हैं; तब पहली अर्थात् "अइडियल" का निर्माण करने वाला कवि है- दूसरे का चतुर्मुख ब्रह्मा-

नामरूपात्मकं विश्वं दृश्यते यदिदं द्विधा।
तत्राद्यस्य कविर्वेधा द्वितीयस्य चतुर्मुखः ॥

भारत में आबाल वृद्ध बनिता प्रतिक्षण गुण ग्रामाभिराम महाराज श्री रामचन्द्र का नाम जो रटा करते हैं यह वाल्मीकि की प्रतिभा का फल है--ऐसा ही नीति तथा गीता का ज्ञान उपदेश करनेवाले महाराज कृष्ण चन्द्र तथा पाण्डवों का यश जो छायाहै वह कृष्ण द्वैपायन व्यास की प्रतिभा का महत्व है--जैसा एक कवि ने लिखा भी है ॥

"पारवश्यं वृथादास्यं पंचानामेकदारता।
पाण्डवानामभूत्कीर्त्यै पाराशर्य कवेर्गिरा ॥

परबश हो चिरकाल तक रहे, व्यर्थ कौरवों के दास बने, पांच पुरुषों की एक स्त्री का होना; इन सब बातों में कोई ऐसी नहीं है जिसकी श्लाघा की जाय किन्तु पाराशर कवि व्यास की वाणी का यह परिणाम है जो पांडवों की सब बातें स्तुति पक्ष में ग्रहण की जाती हैं-कवि जिसे अपनी प्रतिभा का लक्ष्य या उद्देश्य कर ले वह काना हो तो कमल नेत्र बन जाय कदर्य कहो कल्प वृक्ष सा दानी कर दिया जाय कायर बाहु बल में कहो विक्रमादित्य बना दिया जाय ॥

"काणाः कमलपत्राक्षाः कदर्याः कल्पशाखिनः ।
कातराविक्रमादित्याः कविदृक् गोचरंगताः ॥

यह न कहा जायगा कि प्रतिभा वाले सर्वथा निर्दोष हैं बहुत लोग उन्हें स्वेच्छा चारित्व तथा विक्षिप्त Eccentric होने का दोष लगाते हैं जैसा शेक्सपियर अलौकिक प्रतिभाशाली थे किन्तु यह नहीं कह सक्ते कि उनके नाटकों में दोष न थे-काल विपर्यास, दुःख और आनन्द पर्यवसान की खिचड़ी, आदि अनेक दोष हैं किन्तु वर्णन की शैली का सहज सौन्दर्य, अच्छे खयालों का प्रबल प्रवाह, इत्यादि ऐसे गुण हैं जिससे वह कवियों की उच्च तम श्रेणी में रक्खे गये-केवल कबिता ही में प्रतिभा नहीं देखी जाती वरन् हनिबाल नेपोलियन टोगो आदि बीर प्रकाण्ड युद्ध कौशल की प्रतिभा के अवतार हुये-जिन्हों ने युद्ध कौशल के नियमों का मन माना अतिक्रमण कर रक्खा है तौभी वीरत्व यश के यशोभागी हुये और यही उनकी प्रतिभा का प्रमाण है और जो प्रतिभा शाली हों उन्हीं को गुण दोष निरीक्षण में पूरा अधिकार है ॥

गणपति जानकी राम दुबे-

प्रतिभा और पवित्रता

प्रतिभा क्या है सो ऊपर अच्छी तरह बतला दिया गया पर प्रतिभा है और पवित्रता अर्थात् चरित्र नहीं है तो वह प्रतिभा एक प्रकार

लङ्कड़ी सी है; चरित्र शून्य प्रतिभा वाला न तो आदर पाने लायक होगा न संसार का वह काम जिसमें उसको प्रतिभा प्राप्त हुई है भर पूर कर सकेगा-प्रतिभा के साथ पवित्रता वैसी ही है जैसा सोने में सुगन्ध है-प्रतिभावान् पवित्र चरित्र हो तो देव तुल्य पूजनीय होगा किन्तु प्रतिभावाले पवित्र चरित्र बहुत कम पाये जाते हैं प्रतिभा में चरित्र मानो गोट सी लग जाती है-प्रतिभा चरित्र सापेक्ष्य है और चरित्र प्रतिभा सापेक्ष्य नहीं-लोगों पर जैसा चरित्र का असर पड़ता है वैसा प्रतिभा का नहीं-विना प्रतिभा के चरित्रवान् पूजनीय हो जाता है पर प्रतिभा वाला बिना चरित्रके नहीं-इस लिये प्रतिभावान् को चरित्र पालन अत्यावश्यक है--कवियों को चरित्रवान् न होने का दोष लोग लगाते हैं पर यह निर्मूल सा मालूम होता है हम तो यह कहेंगें कि यदि उन्में चरित्र की त्रुटि होती तो कालिदास भवभूति माघ भारवि वाण प्रभृति का काव्य इतना सर्व मान्य न होता--यही बात फारसी के शादी आदि शायर और शेक्सपियर मिलटन आदि अङ्गरेज़ी के पोयट में भी देखी जाती है-प्रतिभा संपन्न रहकर चरित्र का भी दोष उन्मे कोई नहीं सुना गया-वल्कि जयदेव गीत गोविन्द के कर्त्ता बड़े भगवद्भक्त और मिलटन बड़ा पक्का इसाई मत का था तो सिद्ध हुआ कि प्रतिभा और चरित्र दोनों बहुधा साथ २ चलते हैं--

अमर कंटक

यह तीर्थस्थान रीवा राज्य में पेंडरा स्टेशन से प्रायः [illegible] मील पहाड़ के ऊपर समभू भाग में है--सरिद्वारा पुण्य नदी नर्मदा का निकास यहीं से हुआ है--यह स्थान मनोहर और तपो भूमि है--यहां नर्मदा का एक कुण्ड है चारों ओर छोटे वृक्षों का रमणीक सघन वन है इन वृक्षों में कोई कटीले वृक्ष नहीं हैं--कुण्ड के चहूं ओर श्री रामचन्द्र तथा महादेव जी का मन्दिर है एक मन्दिर नर्मदा जी की मूर्ति का भी यहां बना है--यहां से समीप ही गुलबकावली के सुहावने पेड़ों का समूह है--आगे चल कर कपिल धारा नाम का तीर्थ है यहां किसी समय

कपिल मुनि तपस्या करते थे--प्रायः ४० हाथ ऊंचे से दो मोटी धारा नर्मदा की गिरती है--इन धाराओं का इतना वेग है कि पूर्ण धारा में स्नान करना असम्भव है-धारा प्रायः एक एक हाथ मोटी है--स्थान यह अति सुहावना है-यहां की मृत्तिका में धातु का संयोग जान पड़ता है--यह मिट्टी दो रङ्ग की है लाल और पीली--राम रज की यहां कई खदाने हैं-जल में यहां के पाचन शक्ति अधिक है पर्व के दिन बहुधा मनुष्यों की बड़ी भीर हो जाती है--गत अमावश्या के पर्व पर एक लाख के लगभग मनुष्यों की भीर हो गई थी--पंडा यहां का निपट मूर्ख और दुष्ट है-आमदनी उसको बहुत अच्छी है पर इस स्थान की मरम्मत तथा उन्नति में कुछ भी नहीं व्यय करता-मैंने यहां मेले में जो दूकाने देखीं उनमें विदेशी चीनी का प्रचार पाया--जाड़ा यहां बहुत अधिक पड़ता है मेले में कई मनुष्यों की मृत्यु जाड़े के कारण हो गई यह स्थान राज रीवां में है--महाराजा साहब से प्रार्थना है कि वे यहां का कुछ प्रबन्ध करें तो पंडे का अत्याचार कम हो जाय और जो आम दनी पंडे को होती है वह सब की सब उसे न दे स्थान की मरम्मत में लगाया जाय कुंये और तालाब इत्यादि बनवा दिये जांय जिस्में मेलों में यात्रियों को सुख मिले--विदेशी चीनी काम में न लाने का आन्दोलन यहां भी मेले में बहुत कुछ देखा गया--एक ब्रह्मचारी ने प्रण कर लिया है कि यहां जो साधु महात्मा आये उन्हें यह मालूम नहीं है कि यह हड्डी और लहू से साफ की जाती है-मैं उनको इसकी अपवित्रता प्रगट कर इसका प्रचार उनके बीच बन्द करूंगा--महाराज रीवां नरेश को इस तीर्थ की उन्नति का विशेष ध्यान होना चाहिये-श्रीमान् का सौभाग्य है जो ऐसे ऐसे उत्तम तीर्थ उनके राज्य में हैं इस लिये उनसे सविनय निवेदन है कि इस ओर ध्यान दें और इस तीर्थ की उन्नति तथा पंडे के अत्याचार से यात्रियों को मुक्त करें--अङ्गरेज़ी सलतनत के मेलों में जैसा पुलीस अत्याचार फैलाये रहती है सो बात यहां

न देखने में आई--मेले में चोरी का भय कहीं न सुनने में आया--यह सब देख हमारे मन में आया कि अङ्गरेज़ी राज्य से हमारी हिन्दुस्तानी रियासत ही भली कि लोग कानून की बारीकी और प्रबन्ध की खिलावटों के अनेक क्लेश से तो सर्वथा मुक्त हैं-दूसरे यह कि रियासत की प्रजा जो यहां आई थीं प्रसन्न थीं अनेक तरह के कर और टैक्स के बोझ से हलके और छलछिद्र शून्य लोग जान पड़े-अङ्गरेज़ी राज्य की सभ्यता उनमें बिलकुल न पाई गई-धन्य हैं महाराज रीवां जिनकी रियाया अपने राजा को असीसते चित्तसे राज भक्त हैं ॥

पं० ताराचन्द द्विवेदी बिलासपूर मध्यप्रदेश--

अमीर साहब हमें क्या सिखा चले

यह कि सब लोगों का मन कैसे अपने मूठी में लेना होता है; प्रजा पर छोह क्या चीज़ है, समभाव अर्थात् अपने आश्रित चाहो जो हों सब को एक सा कैसे समझना होता है इत्यादि-हमारी गवर्नमेंट अमीर की अपेक्षा कितना गुना अधिक है गवर्नमेंट के मुकाबले अमीर साहब १६ आने में एक आना भी नहीं हैं पर शिक्षा देने में अमीर ब्रिटिश गवर्नमेंट के गुरू हो गये-अलीगढ़ महामेडन कालेज में ६ हज़ार रुपया सालाना दान दे ज़ाहिर कर दिया कि हम से हिन्दुस्तान के आदमियों से कोई सरोकार नहीं तौभी हम को यहां के लोगों के साथ कितनी हमदरदी है--वही हमारी गवर्नमेंट है कि हिन्दुस्तान ही के बदौलत इङ्गलैण्ड की इतनी श्रीवृद्धि है जिस बाटिका के अमृत तुल्य फल फूल का स्वाद अङ्गरेज़ जाति के रग२ में भीन गया है उस बाग के वृक्ष तथा छोटे छोटे पेड़ों के सींचने और उन्हें बढ़ाने में उसे कितना सङ्कोच रहता है-यहां वालों के उपकार की बातों में जब कुछ खर्चना होता है तो मानों निज की गांठ से निकालना पड़ता हो "मालाकार इव प्रयोगनिपुणो राजा चिरं नन्दति" इस नीति का अनुकरण गवर्नमेंट को तभी तक पसन्द आता है जब तक शासक जाति का पूरा

फाइदा है जिसमें केवल शासितों का फाइदा है शासक का नहीं इस तरह की बातों का रास्ता भी सदा बरकाती है-अस्तु गोबध के सम्बन्ध में भी जो रास्ता अमीर दिखा चले उस मार्ग पर यदि गवर्नमेंट चलना पसन्द करे तो भारत में जो गो धन अत्यन्त क्षीण हो गया और होता जाता है वह बच रहे और उससे यहां वालों का कितना कल्याण हो-पर यह निरा प्रजा के फाइदे का है क्यों पसन्द आवेगा अस्तु-

पांच

हिन्दीप्रदीप जिसमें पांच ही अक्षर हैं तथा और २ पत्रों में एक से चार तक की संख्या पर लोगों ने अपनी २ उक्ति युक्ति जमाया है यह देख पांच भौतिक पंच तत्व का बना मुझे भी ५ पर कुछ लिखने का शौक चर्राया। हम हिन्दू हैं इससे पहिले हिन्दू धर्म में ५ को टटोलना समुचित जान पड़ा। हमारे यहां साधारण गृहस्थ मात्र में बिष्णु शिव शक्ति सूर्य और गणपति पंचायतन पूजन विहित है और देवाधिदेव महादेव भी पञ्च वक्त्र माने गये हैं-श्रुद्धि के प्रकरण में पञ्च गव्य की बड़ी महिमा गाई गई है-षोडशोपचार में बिना पञ्चामृत चढ़ाये पूजा ही खण्डित रहती है-पटल पद्धति कवच स्तवराज और सहस्त्रनाम प्रत्येक देवता के ये पञ्चाङ्ग माने गये हैं-शैवी मंत्रों में पञ्चाक्षरी सब के ऊपर है-तीर्थों में पञ्च कोश की यात्रा आवश्यक है। वैष्णवों में पांच रात्र एक संप्रदाय है जिसकी उत्पत्ति नारद पञ्चरात्र से है-चार वेद से सन्तुष्ट न हो व्यास मुनि ने पांचवां वेद इतिहास के नाम से एक लाख श्लोक महाभारत रच डाला। समग्र संसार को अपने बश में लानेवाला पञ्च बाण के वाण भी पांच ही हैं-गुसाईं तुलसीदास ने पांच ही रत्न को सार कहा है "साधु मिलन, अरु हरि भजन, दया, दान, उपकार" पण्डितों ने चतुराई का मूल भी पांच ही माना है-

देशाटनं, पण्डित मित्रताच, वाराङ्गणा, राजसभा प्रवेशः
अनेक शास्त्राण्यवलोकनं, च चातुर्य मूलानि, भवन्ति पंच

हिन्दुस्तान में झगड़ा निवटाने का सहज उपाय भी ५ पञ्च रक्खा है-"पांच पञ्च मिल कीजे काज। हारे जीते नाहीं लाज॥" छात्र मंडली में पञ्च राशिक गणित सबी जानते हैं-होम करने में पण्डित लोग पञ्च मेवा और पञ्च पल्लव ज़रूर बतलाते हैं-भागवत के दशम स्कन्ध में रहस्य पञ्चाध्यायी की ५ अध्याय सब से प्रधान और सरस है-बन माला भी पांच ही की बनती है तुलसी, मन्दार, कुन्द, पारिजात और कमल--पंचाङ्ग धूप के भी ५ ही पदार्थ हैं चन्दन अगर कपूर केशर और गुग्गुल-तिथियों में ५ मी से समाप्त होती हैं-पञ्चमी सप्तमी अष्टमी नवमी और दशमी ५ ही मी से समाप्त होती हैं एकादशी द्वादशी त्रयोदशी चतुर्दशी पञ्चदशी-प्रत्येक वृक्ष के फल, फूल, जड़, पत्ता और डाल को पञ्चाङ्ग वैद्यों ने माना है-महाभारत के प्रधान योधा पाण्डव भी ५ ही थे और उनकी पटरानी द्रौपदी पांचाल राजा की कन्या पांचाली कहाई-कर्म और ज्ञान के भेद से इन्द्रियां भी पांच ही पांच हैं-पांचों अंगुलियां बराबर किसी की नहीं होती-बाल कुमार पौगण्ड युवा और वृद्ध मनुष्य के वय भी ५ ही हैं धनिष्टा से रेवती तक ५ नक्षत्र पञ्चक कहलाते हैं-पंच नखवाले ५ जीवों को मनु ने भक्ष्य लिखा है-"पञ्च पञ्च नखा भक्ष्याः" प्राण अपान समान व्यान उदान के भेद से प्राण वायु भी ५ ही हैं। सोना मोती हीरा लाल नीलम ये ५ पंच रत्न कहे जाते हैं। पशुराज सिंह भी पंचानन कहा जाता है। गोदावरी नदी के समीप श्री राम चन्द्र का निवास स्थान पंचवटी था। बाम मार्ग में पंच मकार ही के सेवन की महिमा है। हुमायूं अकबर जहांगीर शाहजहां औरंगज़ेब ५ ही मुगल बादशाहों में बड़े प्रसिद्ध हुये। एशिया यूरोप अफ्रिका आस्ट्रेलिया अमेरिका भूगोल के महाद्वीप भी यही ५ हैं। ऐसा ही महासागर और पृथ्वी के कटिबन्ध भी पाच ही हैं। झेलम रावी चिनाब व्यासा सतलज ५ नदियां मिल कर पंजाब बनाती हैं। मुसलमानी सलतनत में सरदारों को पंज हज़ारी का खिताब दिया जाता था। हिन्दुस्तान में

युनिवरसिटी ५ ही हैं बंग बिभाग कर लफटिनेन्ट गवर्नरी भी सरकार ने ५ कर दी। इस समय पोशाक का फेशन भी ५ ही है कोट पतलून मोज़ा हैट और नेकटाई। छड़ी घड़ी बूट चश्मा सिगरेट सभ्यता के अंग इस समय ५ ही हैं। व्याकरण में सन्धि का प्रकरण पंचसन्धि कहलाता है। बेदान्त में पंची करण मुख्य विषय है। अखबारों में पंच का लेख पढ़ने लायक और हास्य रस का पोषक होता है। बालकों को लाड प्यार की अवधि ५ ही बर्ष लिखा है "लाडयेत् पंच बर्षाणि" विद्यारंभ संस्कार पाचवें ही बर्ष में करना लिखा है। ३३ करोड़ देवताओं से सन्तुष्ट न हो बहुतेरे हिन्दू ५ पीर को पूजते हैं। १० ब्राह्मणों में ५ पंचगौड़ कहलाते हैं ५ पंचद्रविड़। घोड़ा पंच कल्याणी अच्छा समझा जाता है। पण्डितों ने ५ जकार दुर्लभ कहा है॥

जननी जन्मभूमिश्च जान्हवी च जनार्दनः।
जाति मध्ये यसोबासः जकाराः पंच दुर्लभाः॥

ऐसा ही कड़ी शीत पड़ने पर ५ तकार का सेवन गुणदायक है

अतिबलशालिनि शीते नितरां सेव्यो तकार समुदायः।
ताम्बूलं तरुणवधू तैलं तूलं तनूनपाततरणिः॥

अब अन्त में श्री राम जानकी भरत लक्ष्मण और शत्रुहन इन ५ मूर्तियों को ध्यान में रख इस पचड़े को समाप्त करते हैं॥

हरिनारायण सिंह बी॰ ए॰
शाहपुरा पट्टी शाहाबाद

बायकाट

इस समय बिदेश की बनी बस्तु या बिदेशी पैदावार के बायकाट की बड़ी धूम है। हम कहते हैं उतने से काम न सरेगा बायकाट करने पर उद्यत हुये तो जी खोल बायकाट कर डालिये कसर क्यों रहै

जाय। समाज में पुराने खयालवालों को वायकाट कर दीजिये, तीर्थों के मूर्ख पण्डों को; लोभ के प्रत्यक्ष मूर्ति नाम मात्र के पण्डितों को; आलस्य और अकर्मण्यता की जननी वेदान्तियों की मुक्ति को; प्लेग के कराल कोप में बाल्य बिबाह को; ब्राह्मणों को आलसी और मूर्ख कर देनेवाली दक्षिणा को; हिन्दुस्तान का प्रधान मेवा बैर और फूट को; डाइन सी दिन भर खांव २ करनेवाली बुढ़ियाओं को; स्थानीय कर्मचारियों की हां में हां करनेवाले म्युनिसिपल कमिश्नर तथा समाज के कोढ़ रूप शहर के ऐसे रईसों को; दिखाने मात्र को धर्म धुरीण दम्भ के रूप भक्त जनों को; बिना गांठ का पैसा खोले सेत में पढ़नेवाले नादेहन्द पत्र के ग्राहकों को; इत्यादि सोचते जाइये निकलते आवेंगे जो आप के लिये वायकाट का ज़रिया हैं॥

ईश्वर प्रति

हे जगत्कारण! हे सर्वोत्तम! हे ज्ञान मूर्ति! हे अचिन्त्यबल! हे परम पुरुषपरात्पर परमात्मन्! मैं तेरे दिब्य भव्य शान्त अचिन्त्य बैभव का प्रेम और भक्ति से ध्यान करता हूं। मेरी बुद्धि को सर्बदा शुभ कामों में लगा॥

हे शाश्वत! हे सर्वज्ञ! हे आनन्द मूर्ति! हे मंगल धाम! हे दया मय प्रभु! मैं नम्र भाव से सर्वदा तेरे शरण हूं। हमारे सर्व दुःखों का नाश कर। हम को अपना प्रिय भक्त बना॥

हे बिश्वेश! तू एक निर्मल सुख का अखंड आगार है। जो तुझ से दूर हैं उनको परमानन्द कैसे मिल सकता है? और हे परम पूज्य! तू पवित्रता मंगल न्याय ज्ञान और दया का आगार है इसलिये जो तुझे विस्मरण कर देते हैं उन में यह सब गुण किस तरह आसकते हैं?

हे जगन्निवास! तू अपने भक्तों का सदा ध्यान रखता है। और तेरे अनन्य भाव में आश्रय पाने से जो आनन्द है वह भक्तों के अतिरिक्त और किसी को नहीं मिल सकता॥

हे जगदीश ! तेरी अगाध महिमा एक तू ही जानता है। तेरे अनन्त उत्कृष्ट गुणों के माहात्म्य का ध्यान में लाना भी मेरी बुद्धि के बाहर है। मैं तुझे कैसे जान सकता हूं। तेरे में अनन्य भाव और अनन्त प्रेम ही हमारी जानकारी का सर्वस्व है। तेरे ही ऊपर हमारा सब भार है। तेरी दया की सीमा नहीं ॥

हे देवाधिदेव ! तू अव्यक्त है अर्थात् तू किस प्रकार का है यह जानना बहुतही कठिन है। तू अचिन्त्य है अर्थात् मन से तेरे को जान लेना अशक्य है। तू अनादि काल से सर्वदा विद्यमान सर्वत्रव्यापी और सर्व मूल है। तू परम दयालु है इसके अतिरिक्त हम को तेरे विषय में और कुछ भी ज्ञान नहीं ॥

हे पुण्य पुरुष ! ऐसा कौन है कि जिसको तेरे विषय में अत्यन्त आश्चर्य्य न होता हो? सर्व विश्व तेरी स्तुति गाता है; तथापि तेरी महिमा पूर्णतया तू ही जानता है ॥

हे जगन्नाथ ! मैं दुर्बल और मूर्ख मनुष्य हूं परन्तु यदि तुझ में दृढ़ भाव धरूं तो तेरा माङ्गल्य तेरी शांति तेरी पवित्रता तेरा ज्ञान मुझे सहजही में प्राप्त हो सकता है। तेरा मैं कितना कृतज्ञ हूं। और नहीं जानता यह कृतज्ञता किस भांत प्रगट करूं। एक तेरा ध्यान सर्वदा करता रहूं इसके अतिरिक्त तेरे विषय में मुझे और कुछ सूझता ही नहीं ॥

हे अमित प्रभाव ! कहां तो तेरा अतर्क्य चातुर्य्य और सामर्थ्य और कहां मैं क्षुद्र ! चाहे जितने बिनय Moralcaurage से मैं रहूं, परन्तु तेरे विस्मरण से मुझे ठिकाना नहीं। तुझे अप्रसन्न करने अथवा अपने दुष्कर्मों का फल भोगने का जब समय आता है तब मुझ को तेरी याद आती है। उस समय तेरा ध्यान करते हुये मुझे लज्जा भी नहीं आती। परन्तु तू धन्य है तेरी क्षमा और दया धन्य है। तू माता के समान मुझ पतित पर प्रेम करता है और मेरे तापों को दूर कर शांति की बर्षा करता है ॥

हे तेजोमय आनन्द स्वरूप ! तू हमारे अन्तःकरण में ज्ञान ज्योति अखंड रूप से प्रज्वलित कर। दुर्व्यसन रूप मल के क्षालन करने के लिये मुझ को आत्मज्ञान के बिमल तीर्थ जल में स्नान करने की स्फूर्ति दे। अनित्य वस्तु के विषय में निर्लोभ सत्य और न्याय की प्रीति; नीति विषय में अनुराग और अमित शांति इत्यादि सद्गुण स्वरूप मधुर फलों का यथेच्छ सेवन करने की बुद्धि प्रदान कर। अहंकार महा राक्षस विवेक पद से रगड़ जाय। ज्ञानकी ज्योति अन्तःकरण दीपक में अखंड रूप से जलने के लिये सतत ब्रह्मज्ञान शांति पवित्रता विद्या भक्ति उद्योग परता इत्यादि गुणों का स्नेह (तैल) के समान उपयोग होवे। ज्ञान ज्योति से अज्ञान तम का समूल नाश हो॥

हे कृपा सागर आज दिन अनेकों राष्ट्र जापान अमेरिका जर्मनी इङ्गलेण्ड आदि आनन्द और स्वतन्त्रता पूर्वक हैं। परन्तु जो आर्य भूमि भारत वर्ष किसी समय पृथ्वी भर में एक ही थी और जहां के पुरुष नर रूप देव थे; उसी आर्य भूमि को आज तू सर्वतोपरि दैन्यता में निमग्न कर रक्खा है। हे करुणा वरुणालय! अब तू आर्यावर्त्त के समस्त स्त्री पुरुषों को आर्य शब्द के अर्थ को सार्थक करने की शक्ति दे। और अपने में उनका भाव दृढ़ करके उनमें पुण्य का इस प्रकार विकाश कर कि वे तेरी कृपा के शुभ फलों को प्राप्त हों और उनके अन्तरद्रोह और दैन्य का नाश हो जिस से वह "सुवर्णयुग" अथवा "कृतयुग" उनके नेत्रों के सम्मुख देखपड़ने लगे॥

-लक्ष्मीधर बाजपेयी

लेक्चरों की भरमार

इन दिनों यहां प्रति दिन खूब लेक्चर हुआ किये। दो दिन में ३ लेक्चर बाबू विपिन चन्द्र पाल ने कलकत्ते से यहां आय बायकाट के सम्बन्ध में दिया जिस में उन्हों ने यह सिद्ध कर दिखाया कि बायकाट हमें क्यों करना चाहिये और बायकाट है क्या तथा बायकाट स्वराज्य